चन्दामामा
अप्रैल १९८०

इस तरह बिनाका-टैंक
और दंत-क्षेत्र की सेना
मिलकर
दंत-भक्षक की सेना का
विनाश कर देते हैं.
Binaca Flu
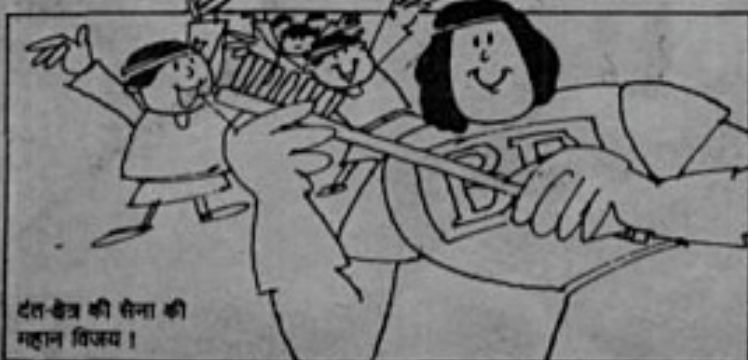
* कार्बोक्सीलिक एसिड ग्रुप का फार्मूला,
जो दांतों के इनेमल को नष्ट करके,
दांतों में दर्दनाक खोखले बनाता है.

अधिक मजबूत दांत,
दंत-क्षय की रोकथाम — बिनाका फ्लोराइड.

चन्दामामा के पाठकों के लिए
अविस्मरणीय

धूमकेतु

(रंगीन सचित्र धारावाही)

आज के व्यस्त दिनों में हम कल जो कहानी पढ़ते हैं, उसे आज भूल जाते हैं, ऐसी हालत में २६ वर्ष पूर्व "चन्दामामा" में प्रस्तुत "धूमकेतु" धारावाही को पुन: प्रकाशित करने के लिए हमारे पाठक बराबर अनुरोध करते आ रहे हैं। इन पच्चीस सालों में चन्दामामा का प्रचार व प्रसार प्रतियों की दृष्टि से तथा अन्य भाषाओं में प्रकाशन की दृष्टि से भी पर्याप्त विस्तार को प्राप्त कर चुका है। इस कारण यह धारावाही १९८० जून के अंक से पुन: प्रकाशित करने जा रहे हैं। इसकी एक और विशेषता यह है कि इसमें प्रस्तुत होनेवाले चित्र हमारे विशिष्ट चित्रकार 'चित्रा' के हैं।

Top the class with Top-class Ambitious Nibs

Look out for the (A) class mark on the nib that you buy.
Ambitious Nibs.....

- (A) Made from stainless steel.
- (A) Tipped with German Platinum Point.
- (A) Electro-plated with 24 Carat Gold.

Write to Publicity Department for attractive Time-table cards and labels.

A sure way to move your writing to (A) Category.

GOLD NIB MFG. CO PVT LTD.
C-101, Phase II, Mayapuri,
New Delhi-110 064.
PHONES : 591875, 590634.

TULIKA/212/79

Asoka Glucose MILK BISCUITS Asoka

हर पल असोका के साथ

एक नयी ताजगी का अनुभव.
जिन्दगी का भरपूर मजा.
कुरकरे, असोका ग्लूकोज मिल्क बिस्कुटों
का आनन्द लीजिए.
विद्युतीय नियन्त्रण से पूर्ण आधुनिक जर्मन
प्लान्ट में स्वास्थ्यकारी गुणों से निर्मित.
दिलकश और ताजे शक्ति से परिपूर्ण
आज ही अपने परिवार के लिए एक पैकिट खरीदिये !

BREEZE

असोका बिस्किट्स हैदराबाद आ. प्र.

असोका क्रेस्पो तथा क्रेस्पोक्रेक के निर्माता

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस मास की बेताल कथा "राक्षस भीति राजनीति" है। मानव-सभ्यता की जंगली अवस्था में किसी भी जाति का राज्य शासन उस जाति के लोगों के द्वारा चुने गये नेता के हाथों में हुआ करता था। लेकिन राजतंत्र के साथ राज्य में कई जातियों को स्थान मिला। समस्त जातियों को समान रूप में देखना सच्ची राजनीति है।

अमर वाणी

इह यत् क्रियते तत्तु परत्रैवोपभुज्यते;
सिक्त मूलस्य वृक्षस्य फलं शाखासु दृश्यते ।

[एक जगह अच्छा कार्य हुआ तो उसका फल दूसरी जगह दिखाई देता है। जैसे पेड़ के थाले में पानी सींचने पर उसकी डालों में फल लगते हैं।]

वर्ष : ३२ अप्रैल १९८० अंक : ८

एक प्रति : १-५० : : वार्षिक चन्दा : १८-००
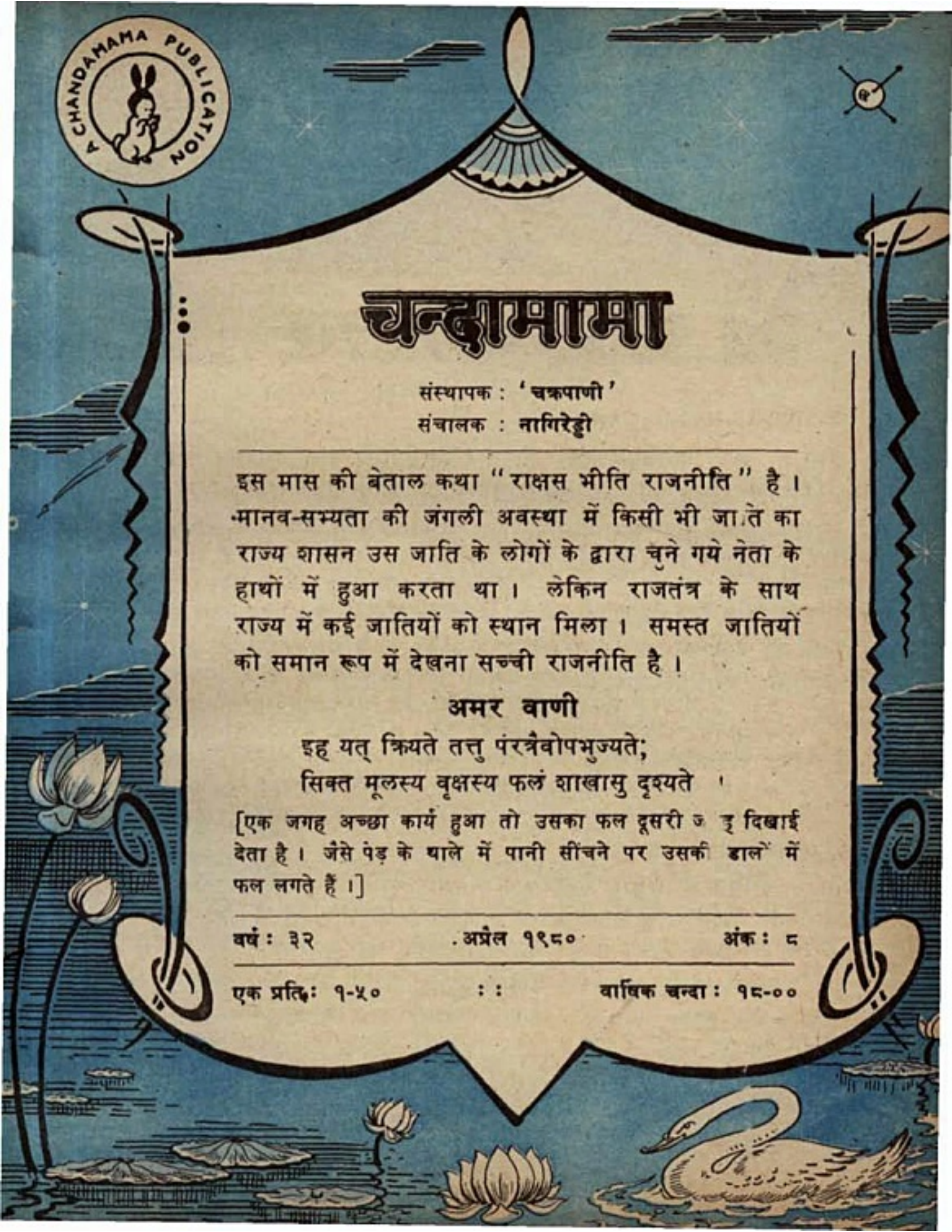
एस. वेणुगोपाल, मछिलीपट्टणम

प्रश्न : पृथ्वी के चुंबक क्षेत्र को पार करनेवाली वस्तु अंतरिक्ष में ही रह जाती है। लेकिन स्काइलाब पुन: उस चुंबक क्षेत्र में आ जाता है, क्या कारण है?

जवाब : पृथ्वी की चुंबक सीमा को पार करनेवाली वस्तु चन्द्रमा के आकर्षण का शिकार हो जाती है। उस वक्त अगर वह चन्द्रमा के आकर्षण के परिणाम स्वरूप जो गति प्राप्त करती है, उसके आधार पर या तो वह चन्द्रमा की परिक्रमा करते उसका उपग्रह बनकर रह जाती है या उसकी गति के बढ़ जाने से वह सूर्य के आकर्षण से सूर्य की परिक्रमा करती रह जाती है।

किसी भी वस्तु को अगर पृथ्वी की चुंबक सीमा को पार करना है तो उसे पृथ्वी से कई हजारों मील की यात्रा करनी होती है. स्काइलाब तो पृथ्वी के चुंबक-क्षेत्र में ही रह गया था, मगर उसकी गति पृथ्वी के आकर्षण को मुक्त करनेवाली थी, इस कारण वह पृथ्वी की परिक्रमा करते रह गया था। यदि वह फिर से पृथ्वी पर आ जाने का प्रयत्न करता तो उसकी गति क्षीण हो जाती है। पृथ्वी के चतुर्दिक स्वेच्छापूर्वक (राकेट की सहायता के बिना) परिक्रमा करनेवाली वस्तु यदि अपनी गति को खो जाती है, तो इसका यही कारण है, कि या तो उसकी परिक्रमा की सीमा के भीतर वायु पतली हो गई है या आसमान में परिभ्रमण करनेवाले उल्काओं के आघात से उसकी गति में मंदता आ गई है।

नरेडल सत्यनारायण गुंटूर

प्र. : डार्विन के विकास सिद्धांत के अनुसार वानर से मानव का उद्भव हुआ है। फिर भी वानर जाति आज भी अस्तित्व में है न? कहा जाता है कि एक जमाने में राक्षस जाति अस्तित्व में थी। पर वह जाति आज क्यों नहीं है?

ज. : मानव का विकास वानरों से हुआ है, यह विचार तो बूढ़ी नारियों का है। किसी मूल जाति के द्वारा बंदर, वानर और मानवों का अलग-अलग विकास हुआ है। वैज्ञानिकों का कहना है कि उस मूल जाति में थोड़े से वानर लक्षण और थोड़े से मानव-लक्षण थे और उन लक्षणों का विकास करनेवाले प्राणी बंदर, वानर और नर वानरों के रूप में विभाजित हुए हैं। (वानरों का मतलब apes उनके पूंछ नहीं होतीं, वे पिछली टांगों पर खड़े हो सकते हैं। वे अगली टांगों का उपयोग हाथों के रूप में भी इस्तेमाल कर सकते हैं।)

यदि राक्षस मानवों के विकास की दशा के अंग हैं तो उनके समाप्त होने में कोई आश्चर्य की बात नहीं है जैसे विकास को न पानेवाली बंदर और वानर जातियों का अंत हुआ है।

[८१]

भूत की कहानी सुनकर राजा ने ब्राह्मणों को बुला भेजा और पूछा–"महाशयो, मेरे यहाँ तीन थनवाली बालिका पैदा हो गई है। इस वजह से जो अमंगल होनेवाला है, उससे बचने का कोई उपाय है?"

ब्राह्मणों ने समझाया–"राजन, अंग विकलता या अधिक अंगवाली स्त्री नीतिविहीना बनकर अपने पति की मृत्यु का कारण बन जाती है। इसी प्रकार तीन थनवाली कन्या को उसके पिता अगर देखते हैं तो वे उसी क्षण मर जाते हैं। इसलिए आप उस शिशु को न देखें! उसे आप एक अलग महल में रखिये! वह जब विवाह के योग्य बन जाएगी, तब उसके साथ विवाह करने की इच्छा रखनेवाले के साथ उसकी शादी करके उन दोनों को आप अपने देश से निकाल दीजिए। ऐसा करने पर आप इहलोक में अपयश और परलोक में पाप से बच सकते हैं।"

राजा ने ब्राह्मणों के कहे अनुसार किया और इस प्रकार ढिंढोरा पिटवा दिया–"राजा की तीन थनवाली कन्या के साथ जो युवक शादी करेगा, उसे एक लाख सोने के सिक्के देकर पति-पत्नी को देश से बहिष्कार किया जाएगा।"

यह ढिंढोरा सुनकर कोई भी युवक राजकुमारी के साथ विवाह करने आगे नहीं आया। सब के मन में यह डर पैदा हो गया था कि राजकुमारी के साथ शादी करने पर मौत निश्चित है, उधर राजकुमारी का सौंदर्य निखर आया था और वह गुप्त रूप से अपनी जिंदगी बिता रही थी।

एक दिन एक अंधा उस नगर में भीख मांगने आया। उसकी मदद के लिए उसी गाँव का एक कुबड़ा भी उसके साथ आया।

ढिंढोरा सुनकर अंधे ने कुबड़े से कहा–"मुझे तुम उस ढिंढोरची के पास ले जाओ, मैं उसकी डुग्गी छूकर मैं अपनी सम्मति जताऊँगा। मेरी पत्नी शुभलक्षणवाली भले ही न हो, मैं तो एक लाख सोने के सिक्के पा लूँगा। सारी ज़िंदगी आराम से काटी जा सकती है, इसके बाद में मर भी जाऊँ तो कोई चिंता नहीं, मेरे जैसे जन्मजात गरीब के लिए मौत भी मुक्ति का मार्ग है? पर थोड़े दिन तो मैं सुख भोग सकता हूँ न?"

मंथरक नामक कुबड़ा अंधे को ढिंढोरची के पास ले गया और डुग्गी छुवाया।

अंधे ने डुग्गी पिटवानेवाले अधिकारी से कहा–"हुज़ूर, अगर राजा मेरे साथ अपनी पुत्री का विवाह करने को तैयार हो तो मैं उनके साथ विवाह करूँगा।"

अधिकारी ने अंधे को राजा के पास ले जाकर बताया कि अंधा राजकुमारी के साथ विवाह करने को तैयार है।

राजा ने कहा–"मेरी शर्त को माननेवाला व्यक्ति चाहे अंधा हो, कोढी हो या अछूत! अगर वह मेरी पुत्री के साथ विवाह करके इस देश को छोड़नेवाला हो, तो उसके साथ मेरी कन्या की शादी करके उसे एक लाख सिक्के दे दूँगा।"

इसके बाद राजा का आदेश पाकर सिपाहियों ने अंधे को नदी में नहलाया, अच्छे वस्त्र पहनाया, शास्त्र-विधि से उसके साथ राजकुमारी का विवाह करके उसके हाथ में एक लाख सोने के सिक्के थमा दिये, तब उसे राजकुमारी के साथ नाव में बिठ.कर यमुना में छोड़ दिया। उनके साथ कुबड़ा भी नाव पर जा बैठा। नाविक उन्हें अपना देश पार कराकर लौट आया।

वे लोग एक बड़े शहर में पहुँचे, एक बड़ा महल किराये पर लेकर वैभवपूर्वक

अपने दिन बिताने लगे, अंधा व्यक्ति भर पेट भोजन करता और आराम से सो जाता। कुबड़ा घर के सारे काम-काज देख लेता।

जल्द ही राजकुमारी और कुबड़े के बीच घनिष्ट संबंध जुड़ गया। एक बार राजकुमारी ने अपने प्रियतम से कहा—"इस कमबख्त अंधे को मार डाले तो हम दोनों अपने दिन आराम से काट सकते हैं। इसलिए तुम कोई जहर लाओ, मैं उसे अंधे के खाने में मिला दूंगी।"

कुबड़ा व्यक्ति जहर की खोज करता रहा, उसे एक जगह मरा हुआ काला नाग दिखाई दिया। उसे ले जाकर कुबड़ा राजकुमारी से बोला—"तुम इसके टुकड़े करके मसाले में मिला दो, मछली की तरकारी जैसे बनाकर अंधे को खिला दो। वह मछली की तरकारी के पीछे जान देता है। इसलिए वह बड़े ही शौक से खाकर अपनी जान से हाथ धो बैठेगा।" यों समझाकर वह खुशी-खुशी अपने काम पर चला गया।

राजकुमारी ने कुबड़े के कहे मुताबिक़ सांप की तरकारी बनाई, अंधे को बुलाकर समझाया—"प्रियतम, तुम्हारे वास्ते मैंने मछली की तरकारी बनाई है। मैं पानी भर लाती हूं। तरकारी चूल्हे पर चढ़ी है। इस बीच तुम इस कलछी से तरकारी को मिलाते रहो।"

अंधा राजकुमारी की बातें सुन बड़ा खुश हुआ। चूल्हे के पास बैठे कलछी

से तरकारी को मिलता रहा। जहरीले नाग से निकलनेवाले भाप ने अंधे की दृष्टि को गायब करनेवाली परतों को गला दिया जिससे उसकी दृष्टि लौट आई।

तब जाकर उसने समझ लिया कि चूल्हे पर बर्तन में नाग के टुकड़े हैं, मछली के टुकड़े नहीं हैं, उसने अपने मन में सोचा–"अरे, यह क्या? राजकुमारी ने मुझसे मछली की तरकारी बनाने की बात क्यों बताई? दाल में काला है। तीन थनवाली औरत के कोई नीति नहीं होती, वह इस कुबड़े या किसी और के साथ संबंध जोड़कर मुझे मार डार डालने की यह चाल चल रही है। मुझे सचाई का पता लगाकर इसके अपराध को खोल देना है!" यों विचारकर तरकारी को मिलाते वह ऐसा अभिनय करने लगा, मानो उसकी दृष्टि लौट न आई हो!

इसके थोड़ी देर बाद कुबड़ा और राजकुमारी भी घर लौट आये। वे यह सोचकर स्वेच्छापूर्वक प्रेमालाप करने लगे कि यह अंधा आदमी उन्हें देख न सकेगा। पर अंधे ने उसे देख लिया। मगर पास में कोई हथियार न था, इस वजह से वह पहले की तरह इधर-उधर टटोलने लगा। इस कारण दोनों ने उस पर कोई ध्यान न दिया।

अंधे ने सहसा कुबड़े को पकड़ लिया, उसे ऊपर उठाकर चारों तरफ़ घुमाया और राजकुमारी की छाती पर मारकर दोनों को एक साथ मार डालना चाहा। मगर हुआ यह कि उस चोट से राजकुमारी का तीसरा थन दबकर गायब हो गया और कुबड़े का कुबड़ापन जाकर वह भी साधारण आदमी बन बैठा।

इस तरह विधि के अनुकूल रहने की वजह से राजकुमारी और कुबड़े ने अंधे को मार डालने की जो योजना बनाई, उसने उनकी अंगविकलता को ठीक करने में मदद पहुँचाई, इस तरह सब का फ़ायदा ही हुआ।

भल्लूक मांत्रिक

[२१]

[कालीवर्मा ने सुरंग मार्ग में जाकर बैरागियों से मंत्रदण्ड ले लिया, इसके बाद वे सब जितकेतु राजा के उद्यान में पहुँचे। उस समय वहाँ पर राजा जितकेतु और माया मर्कट आ पहुँचे। राजा ने उनसे वहाँ पर आने का कारण पूछा। पर गुरु बैरागी "मंत्र दण्ड" और "श्यामगुप्त" चिल्लाने लगा। बाद-]

गुरु बैरागी की बातें राजा की समझ में न आईं। उसने क्रोध में आकर पूछा-"अबे कमबख्त सन्यासी, यह तुम क्या बकते हो? मंत्र दण्ड कहाँ पर है? यह श्यामगुप्त कौन है?"

गुरु बैरागी थोड़ा आश्वस्थ होकर बोला-"महाराज! मैं एक बैरागी हूँ। सन्यासी कहकर मेरा अपमान न कीजिए! बैरागी अलग होता है और सन्यासी अलग। क्या यह फर्क भी आप नहीं जानते?"

यह उत्तर सुनकर राजा खीझ उठा, कुछ कहने ही जा रहा था, तभी माया मर्कट क्रोध से दांत किटकिटाकर बोला-"अबे कपट बैरागी, बात मत बढ़ाओ, असली बात कहो। मेरे हाथ से जिसने मंत्र दण्ड चुराया है, क्या तुमने उसे देख लिया?"

मर्कट की पूंछ के प्रहार से गुरु बैरागी नीचे गिर पड़ा, बदन को झाड़ते अपने शिष्यों की ओर देखा। बड़े शिष्य ने चितापूर्ण चेहरा बनाकर सलाह दी– "गुरुजी! सच्ची बात बता दीजिए। हमें इनाम भी मिल जायगा। नगर की उत्तरी दिशा के द्वार पर जो धर्मशाला है, उसके सामने स्थित महल के मालिक श्यामगुप्त के यहाँ पर ही हमने उस मंत्र दण्ड को देखा है न?"

गुरु बैरागी अपना जवाब देने ही जा रहा था, माया मर्कट किचकिच करते हँस पड़ा, तब बोला–"अरे मूर्ख! अब तुम्हारे गुरु का कहना ही क्या रहा? तुमने ही सारी बातें बदला दीं। हे राजा! इसी वक़्त श्यामगुप्त के घर सिपाहियों को भेजकर वह मंत्र दण्ड मंगवा लीजिए।"

राजा ने जोर से तालियाँ बजाईं। इस पर एक सिपाही दौड़ते आ पहुँचा। राजा ने उसे बैरागियों को दिखाते हुए कहा– "अरे सुनो, तुम इनके साथ थोड़े और सिपाहियों को लेकर जाओ, हमारे नगर के श्यामगुप्त के साथ मंत्र दण्ड भी लेकर शीघ्र पहुँच जाओ।"

सिपाही बैरागियों को साथ ले वहाँ से निकलने को हुए, तभी क़िले की दीवारों के उस पार से शंखनाद सुनाई दिया। माया

गुरु बैरागी ने माया मर्कट की ओर अचरज के साथ देखा, तब अपने शिष्यों की ओर मुड़कर बोला–"अरे मेरे शिष्यो, क्या यही है जो चन्द्रशिला नगर का नया मंत्री बन बैठा है?"

"जी हाँ, गुरुजी! ये ही मर्कटामात्य हैं।" बैरागी के दोनों शिष्यों ने एक स्वर में जवाब दिया। इस पर माया मर्कट बैरागी पर तलवार चलाने को हुआ, पर अपने को संभाल लिया, फिर उसकी कमर पर अपनी पूंछ से दे मारा, तब गरजकर बोला–"अबे, तुमने जो कुछ देखा है, जल्दी बताओ, वरना इस बार मैं तलवार से तुम्हारा सर काट डालूंगा।"

मर्कट उछल कर बोला–"हे राजा! वह शंखनाद करनेवाले महानुभाव मेरे गुरु मिथ्या मिश्र हैं। अब आप समझ लीजिए कि हमारी सारी मुसीबतें दूर हो गई हैं। वे हमारे शत्रु भल्लूक मांत्रिक के साथ राजा दुर्मुख, कालीवर्मा तथा राक्षस उग्रदण्ड का अंत कर डालेंगे। अब आप कुछ ही क्षणों में चक्रवर्ती राजा बनने जा रहे हैं।" ये शब्द कहते वह क़िले की दीवार की ओर चल पड़ा।

राजा जितकेतु ने माया मर्कट का कंधा पकड़कर उसे रोका, तब अपना संदेह प्रकट किया–"सुनो, महामात्य! मेरे सैनिक, सामंत सूर्यभूपति, उन राक्षस उग्रदण्ड और भल्लूक मांत्रिकों से कब तक दुर्ग की रक्षा कर सकते हैं? तुम भी अगर मेरे साथ न रहोगे तो मुझे वक़्त पर सलाह देनेवाला ही कौन है? मुझे ऐसा मालूम होता है कि हमने मंत्री जीवगुप्त का अपमान करके भेज दिया, यह हमारी बड़ी भूल थी।"

"राजन, आपके प्राणों के लिए कोई खतरा नहीं है, आप चिंता न करें।" यों समझाकर माया मर्कट दौड़ पड़ा।

पौधों की आड़ में छिपे ये सारे दृश्य देखनेवाला कालीवर्मा यही एक अच्छा मौक़ा मान कर चलने को हुआ, तभी वहाँ पर सामंत सूर्यभूपति हांफते हुए आ पहुँचा और बोला–"महाराज! मैं अभी यहाँ से निकल कर अपने निजी क़िले में जा रहा हूँ। मैंने सुना है कि एक राक्षस तथा शंखनाद करते अपने शिष्य के साथ पहुँचा हुआ एक मांत्रिक क़िले की दीवारों को तोडकर भीतर प्रवेश करने की कोशिश कर रहे हैं। क़िले के अन्दर मेरी पत्नी, पुत्री और थोड़े सैनिक मात्र हैं।"

राजा जितकेतु आश्चर्य में आकर बोला–"यह सब मुझे कोई गड़बड़ मालूम होता है। एक राक्षस और भल्लूक मांत्रिक मेरे दुर्ग पर हमला करने पहले ही आ पहुँचे हैं, पर एक और राक्षस और मांत्रिक यह क्या बला है?"

यह सवाल सुनकर कालीवर्मा धीरे से हँस पड़ा, तब बोला–"महाराज! यह तो पुरानी बात है। उस वक़्त आप के मन में यह अहं था कि आप एक राजा हैं। इस वक़्त भारी मुसीबतों में फंसकर परेशान हैं।"

इस पर राजा जितकेतु ने सामंत सूर्यभूपति की ओर शंका भरी दृष्टि दौड़ कर पूछा–"कालीवर्मा! सूर्यभूपति एक और राक्षस और मांत्रिक की बात करते हैं। दो मांत्रिक और दो राक्षस कैसे?"

"महाराज! इन सारी गड़बड़ियों का असली कारण है–दो मांत्रिकों के बीच उत्पन्न शत्रुता और बदला लेने की भावना। वे दोनों ब्रह्मपुत्र नदी के जन्मस्थान के समीप स्थित एक पुराने मंदिर के भल्लूकेश्वर के भक्त हैं। उनमें से एक का नाम भल्लूकपाद है। उसी का शिष्य भल्लूक मांत्रिक यहाँ आया हुआ है। दूसरा मिथ्या मिश्र नामक तांत्रिक है। उसी का शिष्य यह माया मर्कट है। अब राक्षसों की बात रही। वे दोनों सगे भाई हैं। उनमें से उग्रदण्ड नामक राक्षस हमारे साथ है। उसके भाई कालदण्ड को तांत्रिक मिथ्या मिश्र ने बन्दी बनाया है।" कालीवर्मा ने समझाया।

कालीवर्मा की बात पूरी न हो पाई थी कि सामंत सूर्यभूपति बोला–"महाराज,

सामंत सूर्यभूपति की समझ में कुछ न आया, वह चारों ओर नजर दौड़ा ही रहा था, तभी पौधों की ओट में से कालीवर्मा ने बाहर निकलते हुए कहा–"महाराज! इस वक़्त मैं आपका दुश्मन नहीं हूँ; आप तलवार न खींचियेगा। मैं यह बात आपसे भी ज्यादा जानता हूँ कि इस वक़्त आप कैसी असहाय हालत में हैं। शायद आप ने देखा न होगा कि आपका मंत्री माया मर्कट क़िले की दीवार फांदकर बाहर भाग गया है।"

राजा जितकेतु पलभर चकित रहा, तब पूछा–"तुम कालीवर्मा हो न? मैंने इसके पहले तुम्हें ही शिरच्छेद का दण्ड दिया था न?"

वही तांत्रिक अपने बन्दी हुए राक्षस को साथ लेकर मेरे क़िले पर हमला करने गया होगा। मुझे आज्ञा दीजिए, मैं पुनः आपके दर्शन कर लूंगा।" यों कहकर वह बड़ी तेजी के साथ वहाँ से चला गया।

राजा जितकेतु चिंतित हो कालीवर्मा से बोला—"वर्मा, अब तुम क्या करने जा रहे हो? ओह! तुम्हारे एक हाथ में मंत्र दण्ड भी है और दूसरे हाथ से तुम म्यान से तलवार भी खींच सकते हो? हो सकता है कि मैं राज्य-शासन में कच्चा हूँ, मगर लड़ाइयों में कायर नहीं हूँ। तुम किस चीज़ का मुझ पर प्रयोग करने जा रहे हो?"

कालीवर्मा ने मंत्रदण्ड तथा म्यान से तलवार खींचकर नीचे फेंक दिये, तब बोला—"महाराज, इनमें से मैं किसी भी चीज़ का आप पर प्रयोग नहीं करने जा रहा हूँ। आपके शासन में जो अन्याय और अत्याचार हुए हैं, उनका दायित्व आपको सलाह देनेवाले मंत्रियों को समान रूप से बांट लेना होगा। फिर भी फिलहाल आपके राज्य को मंत्रिकों तथा राक्षसों से बचाने की जिम्मेदारी मुझ पर भी है।"

ये बातें सुन राजा जितकेतु बड़ा खुश हुआ, नीचे गिरी तलवार को लेकर कालीवर्मा को देने को हुआ, तभी समीप के सुरंग मार्ग से आगे-आगे राजा दुर्मुख, पीछे से भल्लूक मांत्रिक ऊपर आये।

दुर्मुख भयंकर रूप से गर्जन करके म्यान से तलवार खींचकर बोला—"कालीवर्मा, हमने सोचा था कि आप की कोई हानि हुई होगी। लेकिन यह बताइये कि आपने इस राजा जितकेतु को अब तक क्यों ज़िंदा रहने दिया? लीजिये, मैं अभी इन्हें अपनी तलवार के घाट उतार देता हूँ।" यों कहते राजा जितकेतु की ओर बढ़ा।

कालीवर्मा ने बिजली की गति के साथ दुर्मुख की तलवार को अपनी तलवार से रोककर समझाया—"राजा दुर्मुख! जल्दबाजी

न कीजिएगा। इन्हीं राजा जितकेतु के वंश की सेवा करते युद्ध में मेरे पिता वीर स्वर्ग को प्राप्त हुए हैं। उस बात को भूलकर इस वक़्त इस महाराजा का वध करना मेरे लिए पाप का कारण बन सकता है।"

दुर्मुख क्रोध में आकर कुछ कहने को हुआ, तभी भल्लूक मांत्रिक झट से नीचे गिरे मंत्र दण्ड को लेकर बोला–"कालीवर्मा! तुमने खूब कहा। मेरे गुरु भल्लूकपाद का जानी दुश्मन तांत्रिक मिथ्यामिश्र राक्षस कालदण्ड तथा उसके शिष्य जंबुकेश्वर को साथ लेकर इस प्रदेश में आया है। इसलिए मेरा संदेह है कि वह मेरे गुरु की कोई हानि करके ही इधर आया होगा। हमें तत्काल भल्लूकपाद पर्वतों की ओर चलना होगा।"

"अगर हम उस ओर चले जायें तो यहाँ पर उस तांत्रिक के अत्याचारों को कैसे रोकें? मुझे पता चला है कि वह सामंत सूर्यभूपति के क़िले पर हमला करने चला गया है। उस क़िले में कोई भारी सेना तक नहीं है।" कालीवर्मा ने जवाब दिया।

भल्लूक मांत्रिक खीझकर बोला–"ये सारी बातें मैंने सुरंग के मार्ग में प्रवेश करने के पहले ही अपने क़िले की तरफ़ बढ़नेवाले सूर्यभूपति के मुँह से सुन ली हैं। मेरा सीधा सवाल है कि हमें इन राजा और सामंतों के मामलों में क्यों अपना सर देना है?"

कालीवर्मा क्रोध से मांत्रिक की ओर देखते बोला–"मैं इसी राज्य में पैदा हुआ हूँ और इसी मिट्टी में पला हूँ। सबसे पहले इस राज्य और इसके शासकों का हित देखे बिना कहीं पहाड़ों में रहनेवाले एकाकी मांत्रिकों की मदद करने जाना किसी भी दृष्टि से न्याय संगत न होगा।"

यह उत्तर सुनकर भल्लूक मांत्रिक चकित रह गया और बोला–"मेरे शिष्य

कालीवर्मा, तुम कुछ ही क्षणों में कैसे बदल गये? जितकेतु राजा की वे बातें सुनकर धोखा मत खाओ कि ये मंत्र दण्ड लानेवाले को अपना आधा राज्य तथा अपनी दत्तपुत्री देने जा रहे हैं।"

"मेरी इन बातों में आधा राज्य तथा राजकुमारी के साथ विवाह का सवाल ही उठ नहीं सकता। मंत्र दण्ड मैंने महाराजा को नहीं दिया, आप को दिया है न?" ये शब्द कहते कालीवर्मा ने राजा जितकेतु की ओर देखा।

राजा जितकेतु ने अपना सर हिलाकर कहा—"यहाँ पर उपस्थित राजा दुर्मुख आपके समक्ष......" कुछ और कहने जा रहा था, तभी राक्षस उग्रदण्ड अपना पत्थरवाला गदा उठाकर भीकर गर्जन करते सुरंग से बाहर आया और ऊँचे स्वर में बोला—"यहाँ पर राजा दुर्मुख ही नहीं, बल्कि मैं भी हूँ, लो, बधिक भल्लूक भी आ रहा है, महाराज, आप जो कुछ कहना चाहते हैं, इन सबके सामने कह दीजिए।"

राजा जितकेतु उग्रदण्ड को देख पल भर के लिए भयकंपित हो उठा, फिर हिम्मत बांधकर बोला—"मेरे तो कोई संतान नहीं हैं। मैं यही सोच रहा हूँ कि मेरे अनंतर इस राज्य के वारिस किसको बना दूं? अनायास ही इस समय मुझे अच्छा मौक़ा मिल गया है। सूर्यभूपति की पुत्री मेरी दत्तपुत्री है। मैं कालीवर्मा के साथ उसका विवाह करूँगा, मेरे अनंतर इस चन्द्रशिला नगर का राजा वही बन जाएगा।"

इसपर भल्लूक मांत्रिक ज़ोर से चिल्ला उठा—"भल्लूकपाद गुरु की जय।" फिर धीरे से बोला—"आप लोग वास्तविकता को जाने बिना यहाँ पर हवा में क़िले बांध रहे हैं। वह दुष्ट तांत्रिक मिथ्या मिश्र अब तक सूर्यभूपति की इकलौती कन्या को बन्दी बनाकर अपने निवास पहाड़ी प्रदेश की ओर रवाना हुआ होगा। वह कई

दिनों से भल्लूकेश्वरी के वास्ते एक पुजारिनी को प्राप्त करने की कोशिश में लगा हुआ था।"

"मेरे जीवित रहते यह कार्य उस तांत्रिक के लिए संभव न होगा।" ये शब्द कहते वीर कालीवर्मा ने झट म्यान से तलवार खींच ली।

"कालीवर्मा, मैं भी यही प्रतिज्ञा कर रहा हूँ!" यों शपथ लेते हुए राक्षस उग्रदण्ड ने अपना गदा ऊपर उठा।

भल्लूक मांत्रिक मुस्कुरा कर बोला– "उग्रदण्ड! मैं भी यही चाहता हूँ कि तुम लोगों की प्रतिज्ञाएँ सफल हों! इसी सिलसिले में तुम उस तांत्रिक मिथ्या मिश्र के हाथों से तुम्हारे बड़े भाई कालदण्ड को बचा लो। किन्हीं जड़ी बूटियों से उसके दिमाग का मतिभ्रमण करा कर विश्वासपात्र नौकर के रूप में उसका उपयोग कर रहा है। अच्छी बात है, अब मैं चला।" ये शब्द कहते वह सुरंग मार्ग की ओर चला।"

भल्लूक मांत्रिक सुरंग मार्ग के समीप पहुँचने ही जा रहा था, तभी एक झाड़ की ओट में से बधिक भल्लूक "सिरस भैरव!" चिल्लाते परसु उठाये उसके आगे कूद पड़ा और बोला–"मांत्रिक भल्लूक! आपके मंत्र के प्रभाव से आधा भल्लूक बने नगर के इस बधिक की बात क्या होगी? तुम, तुम्हारे गुरु और मैं–हम तीनों भल्लूक नाम से गड़बड़ी के कारण बन बैठे हैं। मुझे क्या फिर से साधारण मनुष्य के रूप में बदल दोगे या मैं इस परसु से तुम्हारा सर काट डालूँ?"

इस पर भल्लूक मांत्रिक थर-थर कांपते हुए बोला–"तुम बधिक भल्लूक नहीं हो, इस नगर के प्रधान बधिक हो। तुम अभी जाकर सिरस वन में दण्ड पाये हुए अपराधियों के सर काट डालो!" इन शब्दों के साथ अपने दण्ड का बधिक भल्लूक के सर पर तीन बार स्पर्श कराया, तब बिजली की गति के साथ सुरंग में उतर गया। (अगले अंक में समाप्त)

राक्षस भीति-राजनीति

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ पर से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, मुझे तो कहना नहीं चाहिए! मगर आप यह जो श्रम उठा रहे हैं, वह राजधर्म के अनुरूप नहीं है। आप ही की भांति महाराजा निरंकुश ने राजनीति के विरुद्ध काम किया। मैं उनकी कहानी सुनाता हूँ, श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों सुनाने लगा : एक जमाने में निकुंज देश पर राजा निरंकुश शासन करते थे। उस देश की सीमा पर स्थित जंगलों में एक राक्षस के प्रवेश करने की खबर राजा को मिली। जंगल के निवासी उस राक्षस से डरकर राजा के पास दौड़े आये और यह खबर राजा को दी।

बेताल कथाएँ

"उसे तुमने राक्षस कैसे माना?" राजा ने फिर पूछा।

"महाराज, हमने खुद अपनी आँखों से देखा है, वह एक पेड़ के नीचे बैठकर कंद-मूल और फल खा रहा था, तभी नजदीक के झाड़-झंखाड़ों के पीछे से एक बाघ उस पर हमला कर बैठा। उसने बाघ की पिछली टांग पकड़कर पेड़ पर पटक दिया और उसे जान से मार डाला। अगर वह राक्षस न होता तो क्या ऐसा कर सकता था? उसके पास न बाण थे और न भाले-बरछे! फिर भी हिरण आदि को पकड़कर भून कर खाते हुए उसको हमारे दल के कई लोगों ने देख लिया है।" जंगलियों ने जवाब दिया।

राजा ने थोड़ी देर तक सोच-विचार करके जवाब दिया–"तुम लोग शायद बिना वजह के डरते हो! फिर भी मैं उसके बारे में सोच लूंगा। वह जब तुम्हारी हानि करेगा, तब तुम लोग उसी वक़्त पहुँचकर मुझे उसकी खबर कर दो। मैं तुम्हें उसके डर से मुक्त करूँगा। फिर भी तुम लोग डरते हो तो नगर की सीमा पर आकर ठहर जाओ। तुम्हारे ठहरने के वास्ते मैं सारे इंतजाम कर दूंगा।"

जंगलीवासियों के चले जाने पर मंत्री ने व्याकुल होकर पूछा–"महाराज, यह

राजा सहसा इस बात पर यक़ीन नहीं कर पाये कि कलियुग के प्रवेश के इतने वर्ष बाद इस दुनिया में राक्षस जीवित हैं। फिर भी जंगल के निवासियों से राजा ने यह जान लिया कि उस राक्षस ने वनवासियों की कोई हानि नहीं की, केवल वे लोग डर के मारे भाग आये हैं।

इसके बाद राजा ने उन लोगों से फिर पूछा–"तुम लोगों को कैसे मालूम हुआ कि वह राक्षस है? क्या वह पेड़ जैसे ऊँचा है?"

जंगलीवासियों ने जवाब दिया–"महाराज वह पेड़ जैसे ऊँचा तो नहीं है तो क्या हुआ? मगर वह जंगली भैंसे के बराबर है।"

क्या? आप उस राक्षस का संहार करना नहीं चाहते?"

"नहीं, पर क्यों?" राजा ने पूछा।

"जो व्यक्ति खाली हाथों से खूंख्वार जानवरों का वध कर सकता है, वह क्या साधारण मानवों की हानि न करेगा? उसकी उपेक्षा करना क्या उचित है?" मंत्री ने पूछा।

"हम लोग खूंख्वार जानवरों का भी तभी शिकार खेलते हैं, जब उनके द्वारा प्रजा को हानि पहुँचती है। ऐसी हालत में नाहक़ हम उस राक्षस का शिकार क्यों खेले?" राजा ने कहा।

"महाराज, मैं आप की बात समझ नहीं पाता हूँ! वह जानवरों के लिए भी क्रूर है! राक्षस है, वह जाति ही मानव समाज के लिए शत्रु-जाति है। ऐसी हालत में उसका संहार करने में आपत्ति ही क्यों?" मंत्री ने पूछा।

राजा फिर थोड़ी देर तक सोचते रहे, तब बोले–"अगर यही आप का विचार है तो आप उस राक्षस के संहार का उचित प्रयत्न कीजिए।"

ये बातें सुनने पर मंत्री को लगा कि उसकी जान में जान आ गई है। उसने उसी वक़्त एक उप सेनापति को बुलवाकर आदेश दिया–"तुम इसी वक़्त थोड़े से सशस्त्र सैनिकों को साथ लेकर जाओ। जंगल में राक्षस का पता लगाकर उसका वध करो और उसकी लाश लेते आओ।"
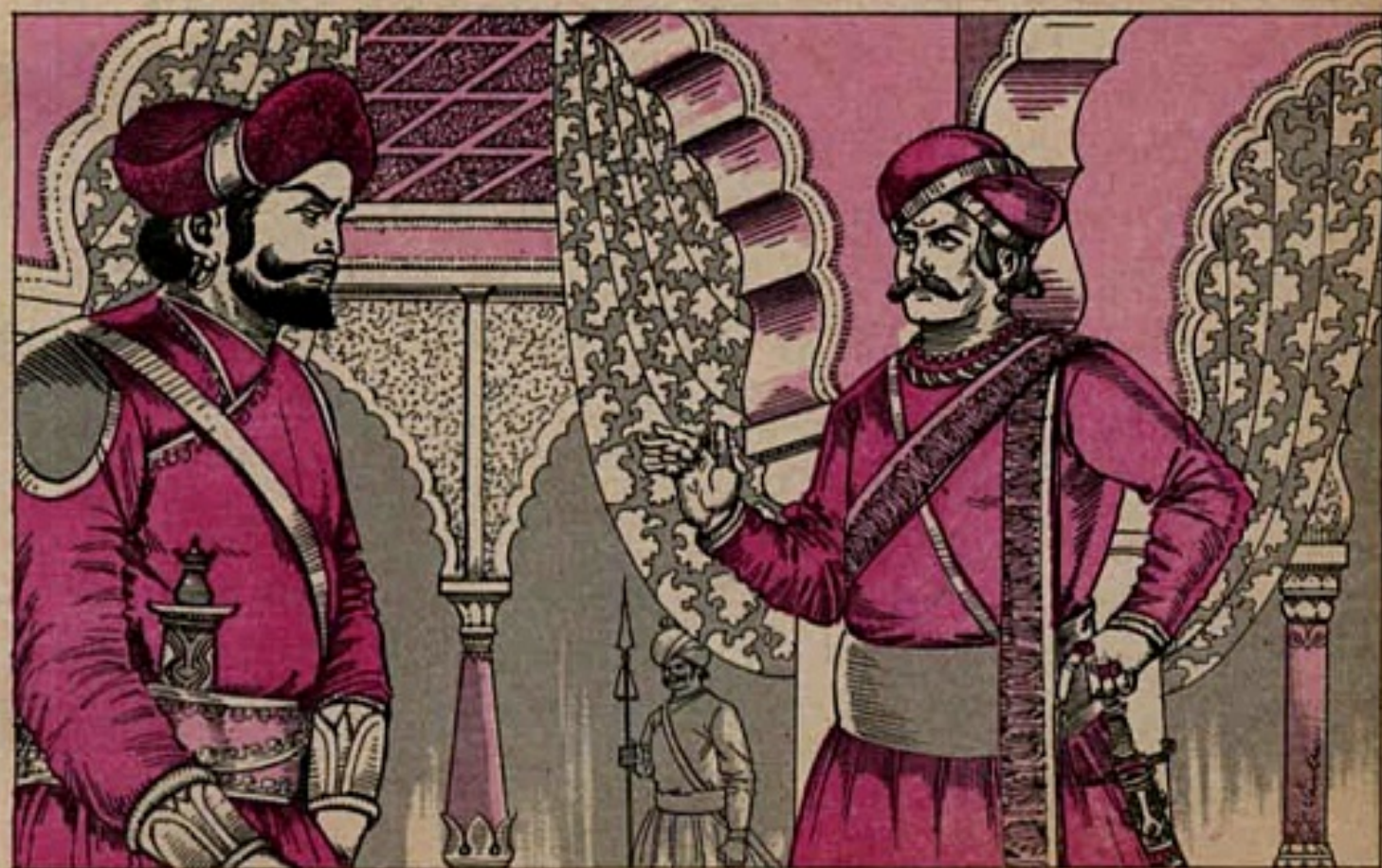
वह उप सेनापति यह नहीं जानता था कि डर क्या चीज होता है? उसने युद्ध भूमि में हाथियों का सामना करके उन्हें मार डाला था। वही उप सेनापति बीस सशस्त्र सैनिकों को साथ लेकर जंगल में पहुंचा। थोड़ी देर बाद उन्हें राक्षस का पता लग गया। पहले बाघ के गरजने की आवाज़ सुनाई दी। इस पर वे लोग उस दिशा में आगे बढ़े। एक राक्षस एक बाघ को चित गिराकर उसकी पिछली टांगें पकड़ करके उसके पेट तथा गले पर पैरों से रौंध रहा है! सैनिकों के देखते-देखते बाघ खून उगलकर मर गया।

इसके बाद राक्षस ने सर उठाकर देखा, उप सेनापति के पीछे आये हुए सिपाही चीखते हुए भाग गये, पर सेनापति तलवार खींचकर राक्षस के साथ लड़ने को तैयार हो गया। राक्षस मानव जाति के सब से लंबे आदमी से भी क़द में एक बित्ता ज्यादा लंबा था। मगर उसका शारीरिक बल वर्णन के बाहर था।

राक्षस बाघ पर से उतरा, बाघ के शव को एक हाथ से उठाकर झाड़ियों के ऊपर से दूर फेंक दिया। तब अपने हाथ धुलते वीर सेनापति की ओर बढ़कर मनुष्यों की बोली में पूछा—"तुम यहाँ पर किसलिए आये हो?" सेनापति को आश्चर्य हुआ। अगर वह मानव है तो उसका संहार करना कोई असंभव कार्य नहीं है, यों सोचकर बोला—"मैं तुम्हारा वध करने आया हूँ। राजा का आदेश है।"

"नहीं, तुम मरने को आये हो!" यों कहते राक्षस ने सेनापति के तलवारवाले हाथ पर मारा, नीचे गिरी तलवार को पैर से दबाकर उसे तोड़ दिया, तब कहा—"अब तुम जा सकते हो!"

उप सेनापति ने अपने राज्य को लौटकर मंत्री को सारी बातें सुनाईं। मंत्री ने राजा को सारा वृत्तांत सुनाकर पूछा—"महाराज, अब हमारा कर्तव्य क्या है?"

"हमें कुछ करने की जरूरत नहीं है। तुम लोग अपना अपना काम कर लो।" आइंदा राक्षस की चर्चा न करने की सलाह देते हुए कहा।

बेताल ने यहाँ तक कहानी सुनाकर कहा–"राजन, राक्षस के संबंध में पहले ही महाराजा निरंकुश के उपेक्षाभाव से रहने का कारण क्या है? क्या इसलिए कि राक्षसों के साथ दुश्मनी मोल लेना खतरे से खाली नहीं है। वैसे राक्षस जाति मानव जाति का शत्रु है न? शायद प्रारंभ में राजा ने जंगली निवासियों की बातों पर यक़ीन किया न होगा, मगर जब उनके सैनिकों ने राक्षस तथा उसकी ताक़त को अपनी आँखों से देखा, तब राजा अपनी सारी सेनाओं का उपयोग करके उसका वध न कर सकते थे? राजा निरंकुश ने ऐसा क्यों नहीं किया? इस शंका का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो आप का सर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा!"

इस पर विक्रमार्क ने उत्तर दिया–"राजा का निर्णय सही है। राक्षस भी मानवों में से एक जाति के लोग हैं। शासन-विधान में अनेक जातियों के लिए स्थान है। किसी भी जाति, वर्ग या वर्ण के लोगों को बिना अपराध के ही दण्ड देना राजनीति के विरुद्ध है। हम अकसर सुनते हैं कि पौराणिक युग में भी मानव जाति की हानि पहुँचानेवाले राक्षसों का ही विष्णु ने मानव रूप में संहार किया है। अपराध करनेवाले व्यक्तियों को ही दण्ड देना राजनीति है। वह राक्षस भी एक व्यक्ति है। उसका वध करने के लिए जो वीर आगे आया, उसको भी राक्षस ने प्राणों के साथ छोड़ दिया। ऐसी हालत में वह राक्षस साधारण मानवों की हानि क्यों करेगा? मंत्री महोदय ने जाति-विद्वेष की जो भावना प्रकट की, वह राजनीति के विरुद्ध है।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

निरर्थक प्रेम

एक बार राधेश्याम एक छुतहरी बीमारी का शिकार हो गया। उसकी देखभाल करने के लिए राधेश्याम की छोटी बेटी उमा मात्र घर पर थी। बड़ी बेटी शशिरेखा की शादी हो गई थी, इस वजह से वह ससुराल चली गई।

वैद्य ने सलाह दी कि राधेश्याम जिन चीज़ों का उपयोग करते हैं, उन्हें अलग रखा जाय। उमा वैद्य की सलाह का पालन करने लगी। मगर उमा का यह व्यवहार राधेश्याम को बड़ा बुरा लगा। राधेश्याम की थाली और लोटा अलग रखा जाता था, उसकी पसंद की चीज़ें खाने दिया नहीं जाता था। इस पर वह अपनी छोटी बेटी उमा पर नाराज़ हो गया, इस कारण राधेश्याम ने शशिरेखा को बुला भेजा।

शशिरेखा को अपने पिता की हालत पर दया आई। उसने निर्णय किया कि उसके पिता जो चीज़ें चाहेंगे, सो खा सकते हैं। उमा ने इसको रोकना चाहा, लेकिन उसकी नहीं चली। उल्टे उमा को शशिरेखा के ससुराल में भेजा गया।

मगर शशिरेखा के आने के बाद राधेश्याम की तबीयत बिगड़ने लगी। वैद्य इसे देख घबरा गया। उसे संदेह हुआ कि राधेश्याम परहेज़ी नहीं कर रहा है।

इस बीच शशिरेखा भी अपने पिता की बीमारी का शिकार हो गई। शशिरेखा के पति ने उमा के द्वारा सारी बातें जान लीं। उसने शशिरेखा को डांटा। इसके बाद शशिरेखा और राधेश्याम को ले जाकर इलाज कराया, तब वे दोनों चंगे हो गये।

मदिरावती की कहानी

कई शताब्दियों के पहले की बात है। उज्जयिनी नगर में यशस्कर नामक एक ब्राह्मण रहा करता था। उसके शशिभूषण नामक एक पुत्र था। वह स्वभाव से अच्छा था और देखने में भी सुंदर था। गुरुकुल में विद्याभ्यास करते समय विजयसेन नामक एक क्षत्रिय बालक से उसकी मैत्री हो गई।

एक दिन विजयसेन के साथ उसकी बहन मदिरावती आचार्य के घर आई। मदिरारती भी अपूर्व सुंदरी थी। उसे देखने पर शशिभूषण के मन में उसके प्रति प्रेम पैदा हुआ।

मदिरावती ने घर लौटकर अपनी माता को शशिभूषण की असाधारण सुंदरता का वृत्तांत सुनाया। शशिभूषण को एक बार अपने घर बुला लाने को मदिरावती की माता ने विजयसेन को बताया।

दूसरे दिन विजयसेन अपने मित्र शशिभूषण को अपने घर लिवा लाया। विजयसेन अपने पिता से जब बात कर रहा था, तब मौक़ा पाकर मदिरावती की सखी धात्रेयी मालती पुष्पों की एक माला लेकर शशिभूषण के पास पहुँची और बोली—"यह माला मेरी सखी मदिरावती ने गूँथ ली है, इसे स्वीकार कीजिए।"

शशिभूषण ने कहला भेजा—"तुम्हारी सखी से बतला दो कि अगर वह चाहेगी तो मैं अपने प्राण तक देने को तैयार हूँ।"

उस दिन से शशिभूषण और मदिरावती के बीच प्रेम बढ़ता गया।

एक दिन एक क्षत्रिय युवक मदिरावती के घर पहुँचा। उसके पिता से मिलकर अपनी इच्छा प्रकट की कि वह मदिरावती के साथ विवाह करना चाहता है, मदिरावती का पिता यह नहीं जानता था कि उसकी

बेटी किसी युवक के साथ प्यार करती है, उसने उस युवक की बात मान ली और मुहूर्त का भी निर्णय किया।

मदिरावती के विवाह की बात सुनने पर शशिभूषण मानसिक बीमारी का शिकार हो गया। उसने कम से कम एक बार मदिरावती को देख अपनी मानसिक व्यथा को थोड़ा-बहुत शांत करना चाहा, लेकिन उसे कोई ऐसा मौक़ा न मिला।

विवाह का दिन आ पहुंचा। मदिरावती को स्नान कराकर अलंकृत किया गया। जल्द ही मंगलवाद्यों के साथ वर भी आ पहुंचा।

तब तक शशिभूषण के मन में यह आशा रही कि किसी प्रकार से मदिरावती की शादी टल जाएगी। मगर अब वह आशा भी जाती रही। शशिभूषण ने सोचा कि इस पीड़ा का अनुभव करने की अपेक्षा आत्महत्या कर लेना कहीं अच्छा है। नियमानुसार विवाह वेदी पर जाने के पहले मदिरावती अपनी सखियों के साथ नगर के बाहर स्थित देवी के मंदिर में प्रतिष्ठित कामदेव की पूजा करती है। उस मंदिर के समीप मार्ग मध्य में बरगद का एक वृक्ष है। शशिभूषण ने सोचा कि उस वृक्ष की डाल पर फांसी लगाने से कम से कम मदिरावती उसके शव को देख सकती है। यों विचार कर शशिभूषण उस ओर चल पड़ा।

इस बीच मदिरावती की सखी धात्रेयी उसी दिन सवेरे शंखह्रद नामक सरोवर में स्नान करने चली गई। उस सरोवर के तट पर जब वह फूल चुन रही थी, तब उसे सोमदत्त नामक एक ब्राह्मण युवक दिखाई दिया जो धात्रेयी की ओर एकटक देख रहा था। इसे देख धात्रेयी लजा गई।

उसी वक़्त दूर पर कोई कोलाहल सुनाई दिया। जंजीर तोड़कर एक मत्त हाथी उनकी ओर तेज़ गति के साथ दौड़ा आ रहा था। धात्रेयी की समझ में न आया कि अब क्या करे? तभी परदेशी

होकर भी वह सोमदत्त धात्रेयी को अपने हाथों से उठाकर भाग गया और दूर पर खड़ी भीड़ के पास पहुँचाया।

बड़ी हिम्मत के साथ अपनी रक्षा करनेवाले युवक का परिचय धात्रेयी प्राप्त करना चाहती थी, मगर इस बीच वह मत्त हाथी लोगों पर टूट पड़ा। लोग जहाँ-तहाँ भाग गये। सोमदत्त भी भाग खड़ा हुआ। थोड़ी देर बाद सोमदत्त लौट आया और धात्रेयी का परिचय पाना चाहा, लेकिन वह युवती दिखाई नहीं दी। क्योंकि धात्रेयी की प्रिय सखी मदिरावती का लग्न मुहूर्त निकट आया था, इस कारण धात्रेयी को सोमदत्त से फिर से मिलने का मौक़ा नहीं मिला।

सोमदत्त इस बात का पता नहीं जानता था कि उसने जिस युवती की रक्षा की, वह कौन है? और उसका नाम क्या है? उसने निश्चय किया कि किसी भ: प्रकार से उस युवती का पता लगाना चा'ए, इस विचार को लेकर सोमदत्त उस वती की खोज में चल पड़ा। बहुत दू चलकर वह देवी क़े मंदिर के समी' आ पहुँचा, तब उसे रास्ते के किनारे ब द की डाल से लटकता हुआ एक युव का शरीर दिखाई दिया। सोमदत्त ने उसी क्षण पेड़ के पास जाकर उस शव को नीचे उतारा। फांसी का फंदा लगाया हुआ शशिभूषण बेहोश था, मगर मरा न था। सोमदत्त उसका उपचार करने लगा।
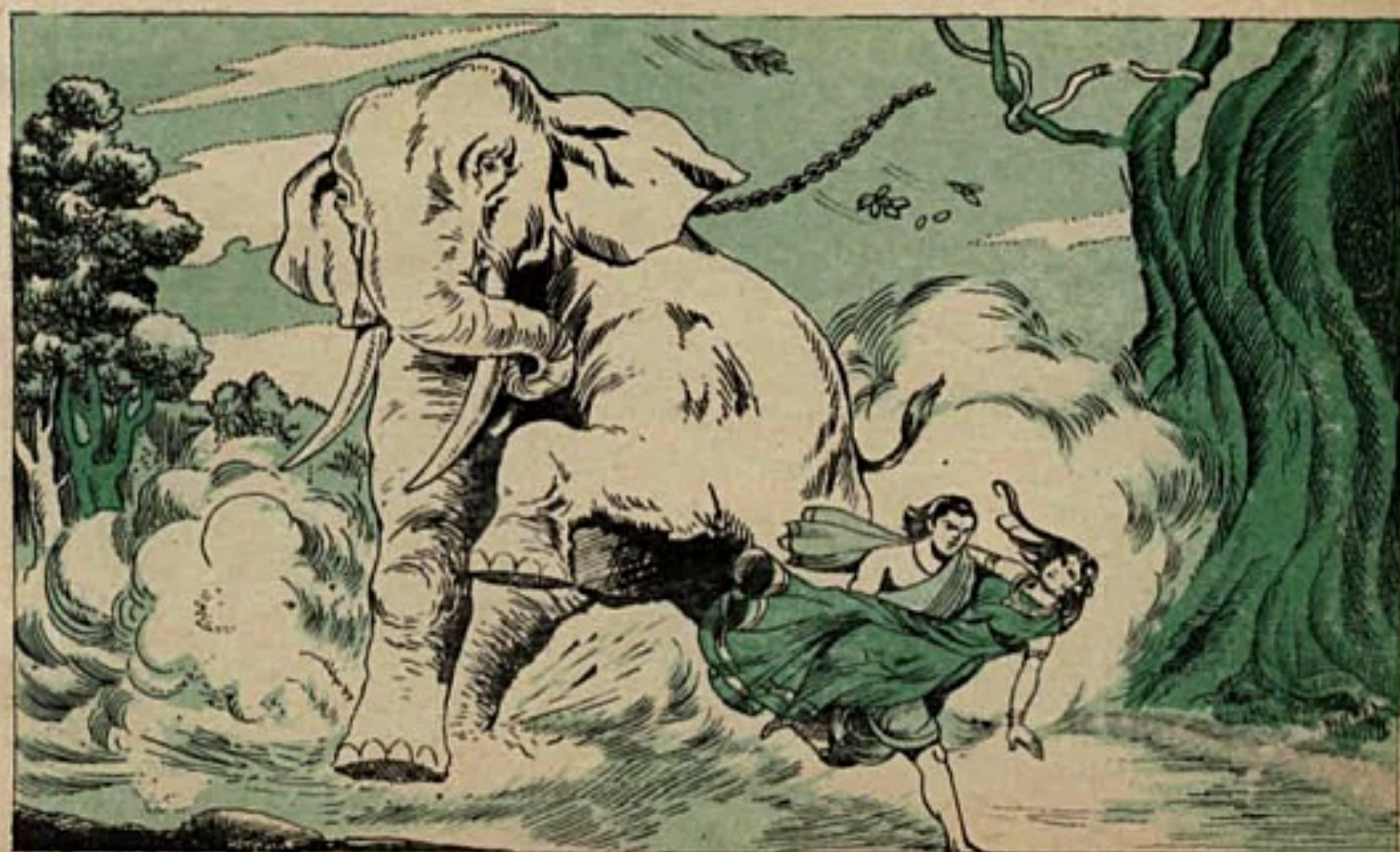
थोड़ी देर बाद शशिभूषण होश में आया। वह उठ बैठा, सोमदत्त से बोला– "भाई साहब, मेरे प्राण बचानेवाले तुम कौन हो? तुमने आखिर मुझे क्यों बचाया? मेरी ज़िंदगी बरबाद हो गई है।" इन शब्दों के साथ उसने अपनी कहानी सुनाई।

सारी बातें सुनकर सोमदत्त ने समझाया– "पगले कहीं के? क्या यही पुरुषार्थ है? मैंने भी तुम्हारे जैसे एक कन्या के साथ प्यार किया है। मैं नहीं जानता कि वह कौन है? फिर भी मैं सर्वत्र उसकी खोज कर रहा हूँ।" इन शब्दों के साथ उसने भी अपनी कहानी सुनाई।

उन दोनों के बीच यों बातचीत होती ही रही, तभी दूर पर उन्हें मंगल-वाद्य सुनाई दिये।

"लो, देखो, मदिरावती कामदेव की पूजा करने चली आ रही है।" शशिभूषण ने कहा।

"तब तो हम मंदिर के पीछे छिप जायेंगे।" सोमदत्त ने सलाह दी।

दोनों युवक जब मूर्तियों के पीछे छिप गये, तब मदिरावती अपनी सखियों के साथ मंदिर में आ पहुँची। उसने अपनी सखियों को बाहर ही रहने का आदेश दिया, अकेली ही मंदिर के गर्भगृह में पहुँची। मंदिर के द्वार बंदकर धीमी आवाज़ में रुद्ध कंठ से बोली–"हे कामदेव! मैं एक युवक से प्यार करती हूँ, पर तुम दूसरे के साथ मेरा विवाह क्यों करा रहे हो? अगर इस जन्म में मेरी इच्छा की पूर्ति न होगी तो शीघ्र ही दूसरे जन्म में मुझे शशिभूषण की पत्नी बनने का अनुग्रह करो:" यों प्रार्थना करके अपने आँचल को कंठ से लपेट कर वह फांसी लगाने को तैयार हुई।

उस वक़्त मूर्ति के पीछे से बाहर आकर शशिभूषण ने उसे फांसी लगाने से रोका।

सोमदत्त भी मूर्ति के पीछे से बाहर आया। उसने समझाया–"अब हमें बातचीत

करने का मौक़ा नहीं है। अंधेरा हो चला है। शशिभूषण तुम अपनी प्रेमिका को मेरी पोशाकें पहनवाकर उसे साथ ले अपने गाँव की ओर भाग जाओ। इस बीच में इस युवती के वस्त्र पहन कर बाहर चला जाऊँगा।"

इसके बाद सोमदत्त ने मदिरावती के वस्त्र धारण किये, अपने चेहरे को बचाने के लिए घूंघट डाल लिया। तब वह मंदिर का द्वार खोलकर बाहर आया। सखियों ने सोचा कि मदिरावती ही बाहर आ गई है, वे विवाह के मंगल गीत गाते बाजे-गाजों के साथ लौट गईं। उनके चले जाने के थोड़ी देर बाद शशिभूषण तथा पुरुष के वेष में मदिरावती मंदिर से बाहर आये, रात-भर जंगल के मार्ग में यात्रा करके आखिर अचलपुर नामक गाँव पहुँचे। वहाँ पर एक ब्राह्मण ने उन्हें अपने घर आश्रय दिया। वहीं पर उन दोनों ने एक मंदिर में शास्त्र-विधि से विवाह किया।

इधर मदिरावती के वेष में स्थित सोमदत्त जब सखियों के साथ लौटा, तब तक धात्रेयी भी शंखह्लद से लौट आई थी। अपना वृत्तांत अपनी प्रिय सखी को बताने के लिए ज़्यादा समय न था। इस कारण धात्रेयी मदिरावती की बाएँ पकड़ कर बोली—"सखी, जल्दी चलो, तुम्हें एक रहस्य बता देना है।" यों कहकर उसे एक एकांत कक्ष में ले गई। इस बीच घूंघट में से ही सोमदत्त ने धात्रेयी को

देख पहचान लिया और वह मन ही मन आश्चर्य चकित हो सोचने लगा–"मैं सपना देख रहा हूँ या यह कोई जादू है? या भगवान का विशेष अनुग्रह है?"

धात्रेयी बोली–"सखी, जो तुम्हारा प्रेमी नहीं है, वही तुम्हारा पति होने जा रहा है। मैं तुम्हारी व्यथा को जानती हूँ। पर जब तुम अपनी पीड़ा को सहन न कर पा सकोगी, तब मेरी बात याद करो। क्योंकि मैं एक अभागिनी हूँ। तुम्हारे जैसे मैंने भी एक युवक के साथ प्यार किया है। लेकिन मैं यह नहीं जानती हूँ कि वह कौन है। उसका नाम क्या है? और वह कहाँ रहता है? तुम तो अपने प्रियतम को फिर से देख सकती हो, मगर मुझे यह आशा तक नहीं है।" इन शब्दों के साथ धात्रेयी ने अपना सारा वृत्तांत उसे सुनाया।

सारा वृत्तांत सुनकर सोमदत्त परमानंदित हो उठा, तब अपना घूँघट हटाकर धात्रेयी को अपना चेहरा दिखाया। इस पर धात्रेयी के आश्चर्य और आनंद की कोई सीमा न रही। पर जब तक सोमदत्त ने सारा वृत्तांत सुनाकर मंदिरावती को शशिभूषण के साथ भाग जाने की कहानी समाप्त नहीं की तब तक वह अपनी आँखों पर विश्वास न कर पाई।

इस पर सोमदत्त ने समझाया–"हमें इस तरह बातचीत करते रहने से कोई फ़ायदा नहीं है। हमें भी शीघ्र यहाँ से भाग जाना है, वरना हमारा रहस्य प्रकट हो जायगा। इसलिए हमारे यहाँ से भाग जाने का कोई उपाय सोच लो।"

इसके बाद धात्रेयी ने अपने सारे आभूषण निकाल कर एक वस्त्र में बांध दिया। सोमदत्त को साथ लेकर पिछवाड़े के रास्ते से बाहर आई और अंधेरे में बगीचों के बीच में से गाँव के बाहर आ गई। वहाँ से चलकर थोड़े दिन तक यात्रा करते रहें, आखिर एक अग्रहार में पहुँचकर दोनों ने विवाह कर लिया। वहीं पर अपना स्थिर निवास बनाकर सुखपूर्वक रहने लगे।

परशुराम

[२]

कार्तवीर्यार्जुन हैदयवंशी राजा थे। कृतवीर्य के पुत्र होने की वजह से वे कार्तवीर्य कहलाये। उनका असली नाम अर्जुन था। उनके पुत्र बड़े ही दुष्ट थे। जब मुनि जमदग्नि और उनके पुत्र आश्रम में न थे, तब उन लोगों ने बछड़े के साथ जमदग्नि की होमधेनु को भगा ले जाने की कोशिश की, मगर सफल न हुए।

इसके बाद कार्तवीर्य जमदग्नि के आश्रम में पहुँचे। अतिथि-सत्कार पाने के बाद उन्होंने जान लिया कि जमदग्नि के पास जो गाय है, वह समस्त कामनाओं की पूर्ति करनेवाली कामधेनु है। इस पर कार्तवीर्य ने उसकी माँग की। लेकिन जमदग्नि ने उसे देने से साफ़ इनकार किया। तब कार्तवीर्य ने क्रोध में आकर जमदग्नि को मार डाला, मगर वे उस गाय को नहीं ले जा सके। उस समय राम जंगल में थे। तब उन्होंने शंका की कि उनकी कोई हानि हो गई है। जब वे आश्रम को लौटे, तब उनके पिता की लाश पर गिरकर रोनेवाली उनकी माता दिखाई दी। कहा जाता है कि राम की माता ने हैहेय के द्वारा अपने पति को मार डालने का समाचार अपने पुत्र को बताकर इक्कीस बार अपनी छाती पीट ली।

इस पर राम ने अपनी माता को सांत्वना दी और इक्कीस बार क्षत्रिय-वंशों को निर्मूल करने की शपथ ली। तब अपने पिता के शव के लिए दहन-संस्कार करने का प्रयत्न शुरू किया। इस बीच संयोग से भृगु महर्षि वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने जमदग्नि पर मंत्र जल छिड़क

किया, जिससे जमदग्नि फिर से ज़िंदा होकर उठ बैठे।

अपने पिता को जीवित देख राम बहुत खुश हुए। उन्होंने अपने पिता को बताया कि एक क्षत्रिय का यह अत्याचार देख उसके बदले में इक्कीस बार क्षत्रियों का निर्मूल करने की शपथ ली है।

यह समाचार सुनने पर जमदग्नि ने राम के क्रोध को शांत करने का प्रयत्न किया, पर राम ने बताया कि उदासीन रहने का मतलब अपराधियों को प्रोत्साहन देना होता है, इसलिए अकारण हत्या करनेवालों को दण्ड देना ही चाहिए।

अपने पुत्र को उसकी प्रतिज्ञा पर दृढ़ देख जमदग्नि ने उसे समझाया कि वह ब्रह्मा के पास पहुँचकर उनके निर्णय के अनुसार व्यवहार करे।

राम ने ब्रह्मा के पास पहुँचकर उन्हें अपनी शपथ का वृत्तांत सुनाया और इस संबंध में उनका अभिप्राय पूछा। पर ब्रह्मा को राम की प्रतिज्ञा पसंद न आई, फिर भी वे स्पष्ट रूप से यह बात कहना नहीं चाहते थे, इसलिए उन्होंने सलाह दी–"राम, ईश्वर के अनुग्रह के बिना तुम्हारी प्रतिज्ञा सफल न होगी, इस वजह से तुम शिवजी के पास जाओ।"

राम जब शिवजी के पास पहुँचे, तब शिवजी के साथ पार्वती भी थी। राम की प्रतिज्ञा की बात सुनकर पार्वती ने कहा–"शिवजी के अनुग्रह से कोई भी

कार्य संभव हो सकता है, लेकिन इस वक़्त तुम्हारे पास उपयुक्त अस्त्र नहीं हैं न?"

यह बात सुनकर शिवजी ने राम को अस्त्र और कवच दे दिये। राम शिवजी के यहाँ से लौट पड़े। रास्ते में उन अस्त्रों को एक तड़ाग के किनारे रखकर राम जप करने बैठ गये। इतने में हिरणों की एक जोड़ी इस तरह दौड़ी आई, मानो कोई उनका पीछा कर रहा हो। तब तड़ाग में उतरकर वे हिरण पानी पीने लगे।

उन हिरणों का शिकार करने के लिए आया हुआ व्यक्ति राम को दिखाई नहीं दिया, लेकिन हिरणी ने हिरण से कहा– "अब हमें डरने की कोई जरूरत नहीं है। जप करनेवाला व्यक्ति राम है। यह व्यक्ति अगत्स्य के आश्रम में जाकर कृष्णामृत स्तोत्र सुन ले तो इसे कृष्ण-कवच प्राप्त हो जाएगा।"

ये बातें सुन राम अगस्त्य के आश्रम की ओर निकल पड़े। रास्ते में उन्हें मृगों का पीछा करनेवाला शिकारी दिखाई पड़ा। राम ने उस शिकारी का वध किया, अगत्स्य के आश्रम में पहुँचकर वहाँ पर कृष्ण-स्तोत्र सुना। इसके बाद राम ने कृष्ण का ध्यान किया, कृष्ण ने प्रत्यक्ष होकर राम को अपना तेज प्रदान किया।

इसके बाद राम ने नर्मदा नदी में स्नान किया, कार्तवीर्य के नगर में पहुँचकर उन्हें खबर भिजवा दी कि वे उनका वध करने आये हुए हैं।

कार्तवीर्य ने राम के पास खबर भेज दी–"ब्राह्मण जो भी माँगे, मैं इनकार नहीं कर सकता। जमदग्नि का पुत्र युद्ध करने की मांग करे तो मैं ज़रूर उसकी पूर्ति करूँगा।" इसके बाद कार्तवीर्य ने अपनी सेनाओं को युद्ध के लिए तैयार कर राम के साथ युद्ध करने भेजा। मगर राम ने अपने परशु से उन सेनाओं को तितर-बितर कर दिया।

इसके बाद अन्य क्षत्रियों ने मिलकर एक साथ राम पर आक्रमण किया। कई दिनों तक युद्ध चलता रहा। उन युद्धों में मत्स्य राजा, मगध राजा, निषाद राजा, विदर्भ के राजा सोमदत्त और मिथिला के राजा बृहद्बल काम आये।

इसी प्रकार कन्याकुब्ज और सौराष्ट्र के राजा तथा अवंती के वीरों ने एक साथ राम पर हमला बोल दिया और राम पर बाणों की वर्षा की। पर राम ने उनके सारे बाणों को तोड़कर उन सब को मार डाला।

फिर सुचन्द्र नामक राजा राम के साथ युद्ध करने आगे आये। उन्होंने राम पर शिवजी के त्रिशूल को ही फेंक दिया। पर वह एक पुष्प माला बनकर राम के कंठ को सुशोभित करने लगा। उस वक़्त राम को काली माता ने दर्शन देकर सलाह दी–"राम, अगर तुम सुचन्द्र पर आग्नेयास्त्र का प्रयोग करोगे तो वह मर जाएगा।" सुचन्द्र के मरने पर उनका पुत्र पुष्कराक्ष राम के साथ युद्ध करने आया।

इतने सारे लोगों के मरने के बाद कार्तवीर्य राम के साथ युद्ध करने के लिए स्वयं युद्ध भूमि में आये और अपने त्रिशूल से राम को बेहोश कर दिया। इस पर राम गिर गये, तब वहाँ पर सारे देवता आ पहुँचे। उनके साथ आये हुए शिवजी ने राम को संजीवनी के द्वारा जिलाया।

राम ने शिव-कवच का जाप कर कार्तवीर्य पर बाण चलाया, तब उनका सिर फट गया। फिर कार्तवीर्य के सारे पुत्र राम के हाथों में मर गये। (और है)

महा प्रस्थान

महाभारत युद्ध में विजय पाने के बाद पांडवों ने कई वर्षों तक सुखपूर्वक राज्य किया। अंत में युधिष्ठिर ने राज्य को त्यागकर महा प्रस्थान करने का संकल्प किया।

राज्य-त्याग करनेवाले युधिष्ठिर ने अपने पोते परीक्षित का वैभव के साथ राज्याभिषेक किया। उस अवसर पर ऋषियों और सामंतों ने परीक्षित को आशीर्वाद दिये।

इसके बाद पांडव हिमालयों की ओर निकल पड़े। उनके साथ द्रौपदी भी चल पड़ी। सब ने सादे वस्त्र धारण किये। राज्य-वैभव को त्यागने की चिंता उनमें बिलकुल नहीं रही।

वे सब हिमालयों पर चढ़ने लगे। उनका मार्ग लंबा और कठिनाइयों से पूर्ण था। उनके रास्ते में अनेक पुण्य तीर्थ, ऋषियों के आश्रम और देवताओं के निवास भी आ पड़े। उस मार्ग मध्य में सर्व प्रथम द्रौपदी का देहांत हुआ। इसके बाद पांडव एक-एक करके मृत्यु को प्राप्त करते गये। अंत में युधिष्ठिर अकेले बच रहें।

अकेले चलनेवाले युधिष्ठिर ने भांप लिया कि उनके साथ एक कुत्ता भी चल रहा है । रास्ता ख़तरों से खाली न था, फिर भी वह कुत्ता युधिष्ठिर का साथ छोड़े बिना चला जा रहा था ।

युधिष्ठिर जब हिमालयों के शिखर पर पहुँचे, तब इन्द्र ने उन्हें दर्शन देकर स्वर्ग में प्रवेश करने का स्वागत किया । इस पर युधिष्ठिर ने स्पष्ट शब्दों में बताया कि उनके साथ चलनेवाले कुत्ते को भी स्वर्ग में प्रवेश मिलने पर वे भी स्वर्ग में क़दम रख सकते हैं ।

युधिष्ठिर की शर्त को इन्द्र ने नहीं माना । तब युधिष्ठिर ने इन्द्र के रथ पर सवार होने से इनकार किया । तब कुत्ते ने फिर से यमराज का रूप धारण किया । इस प्रकार यमराज ने युधिष्ठिर की जो परीक्षा ली, उसमें वे सफल निकले ।

स्वर्ग में पहुँचने पर देवताओं ने युधिष्ठिर का स्वागत किया। मगर वहाँ पर उन्होंने अपने छोटे भाइयों तथा द्रौपदी की खोज की, उन्हें मालूम हुआ कि वे सब नरक में हैं। इस पर युधिष्ठिर ने स्वर्ग में जाने से अस्वीकार किया और वे भी नरक में जाने को तैयार हो गये।

नरक द्वार से देखने पर युधिष्ठिर को नरक दिखाई पड़ा। तब जाकर युधिष्ठिर ने जान लिया कि उनके छोटे भाई और द्रौपदी थोड़े समय तक नरक में रहकर स्वर्ग में चले गये हैं। उन्होंने छोटा-सा पाप किया था, परिणाम स्वरूप उन्हें नरक के दर्शन करने पड़े।

इसके बाद वे सदा के लिए स्वर्ग में आ पहुँचे। गृहस्थ जीवन बितते हुए भी मानव सत्य का आचरण करते हुए पुण्यात्मा बने रह सकते हैं, इसका प्रमाण युधिष्ठिर का जीवन है।

सच्चा हीरा

पुराने जमाने की बात है। एक बार सिद्धिपुर के निवासी नागराज और कृष्णदास नामक दो मित्र तीर्थाटन करने चल पड़े। वे घोड़ों पर सवार हो कई दिन बाद काशी पहुँचे। विश्वेश्वर के दर्शन करने के बाद प्रयाग चले गये। त्रिवेणी के संगम में स्नान किया। बर्तनों में गंगा जल भरकर वापस लौट पड़े।

रास्ते में एक पेड़ के नीचे उन्हें एक बूढ़ा दंपति दिखाई दिया। बूढ़ी ने यात्रियों को रोककर पूछा–"बेटे, मेरे पति के वास्ते थोड़ा गंगा जल दे दो।"

"हम लोग बड़ी दूर से यह गंगा जल ले जा रहे हैं। यह तुम्हें कैसे दे सकते हैं?" नागराज ने कहा।

पर कृष्णदास ने अपना बर्तन उस औरत के हाथ देते हुए कहा–"माई, आप यह पवित्र गंगा जल ले लीजिए।"

बूढ़ी औरत ने बर्तन लेकर बूढ़े के हाथ थमाया। बूढ़े ने थोड़ा गंगा जल लोटे में भरकर पी लिया। इसके बाद इस तरह उठकर खड़ा हो गया, मानो अपूर्व ताक़त पा गया हो, तब कृष्णदास के पास जाकर प्रणाम करके बोला–"महाशय, आज आप हमारे घर मेहमान बनकर आ जाइये। मेरा नाम विशाल गुप्त है। मैं अपने घर पहुंचने के बाद आपको सारी बातें समझा देता हूँ।" फिर नागराज की ओर मुड़कर बोला–"आप भी इनके साथ मेरे घर चलियेगा।"

बूढ़े का स्वागत पाकर दोनों यात्री विशाल गुप्त के एक सुंदर भवन में पहुँचे। वहाँ पर विशाल गुप्त के कई सेवक दिखाई दिये। उन्हें पता चला कि विशाल गुप्त की पत्नी के रूप में अभिनय करनेवाली औरत उसकी एक परिचारिका है। विशाल गुप्त ने कृष्णदास से कहा–"मेरे

जगमोहन सिंह

पिता धनगुप्त ने व्यापार करके अपार धन और रत्न कमाये। उन्होंने मरने के पहले मुझे बताया कि हर साल चैत्र पूर्णिमा के दिन एक सज्जन व्यक्ति को एक हीरा सौंप दूं। इस साल मेरी क़िस्मत से आप मुझे दिखाई दिये। कल आप के रवाना होते वक़्त में एक हीरा दूंगा, उसे स्वीकार करके मुझे धन्य बनाइये।"

इस अप्रत्याचित क़िस्मत पर कृष्णदास चकित रह गया, पर कृष्णदास की क़िस्मत को देख नागराज ईर्ष्या से भर उठा।

दूसरे दिन विशाल गुप्त ने कृष्णदास के हाथ एक हीरा देकर कहा–"आप सिद्धिपुर जा रहे हैं न? रास्ते में पड़नेवाले नागपुर में पुखराज नामक एक जौहरी है। वह आपको इस हीरे का मूल्य दे देगा।"

इसके बाद दोनों यात्री विशाल गुप्त से विदा लेकर चल पड़े। इस बीच नागराज के मन में उस हीरे को हड़पने का लोभ पैदा हुआ। वे दोनों रास्ते में जब एक सराय में आराम करने के लिए ठहर गये, तब नागराज ने कृष्णदास के यहाँ से उस हीरे को हड़प लिया।

कृष्णदास ने जब हीरा खो जाने का समाचार नागराज को सुनाया, तब उसने आश्चर्य प्रकट किया, फिर सलाह दी कि उस हीरे को फिर से प्राप्त करने तक उस गाँव को छोड़ना नहीं चाहिए।

इस पर कृष्णदास ने कहा–"इस गाँव में हमारी मदद करनेवाले कौन हैं? वह हीरा जैसे मिला, वैसे खो भी गया।"

इसके बाद वे दोनों नागपुर पहुँचे। कृष्णदास ने पुखराज से मिलने की बात कही। मगर नागराज ने सुझाया–"हीरा तो खो गया है, अब उनसे मिलने की क्या जरूरत है?"

"ऐसी बात मत कहो। विशाल गुप्त के साथ हमारी मैत्री पुखराज के परिचय से पूर्ण हो जाएगी न? यह कोई जरूरी नहीं है कि हम सिर्फ़ हीरा बेचने के लिए ही उसके घर पहुँचे।" कृष्णदास ने समझाया।

"तब तो आप ही आइये, मैं इस बीच शहर देख आता हूँ।" नागराज ने कहा।

कृष्णदास के चले जाने पर नागराज एक जौहरी की दूकान में पहुँचा और पूछा— "इस हीरे को आप कितनी क़ीमत देंगे?"

जौहरी ने हीरे को देखते ही नागराज से पूछा—"यह आप को कैसे मिला?"

"मेरे पिताजी ने इसे ख़रीद लिया है। मुझे इस वक़्त धन की ज़रूरत आ पड़ी, इसलिए मैं इसे बेचना चाहता हूँ।" नागराज ने जवाब दिया।

जौहरी हँसकर बोला—"आपके पिता को किसीने ख़ूब चकमा दिया है। यह तो कांच का टुकड़ा है। इसकी क़ीमत एक कौड़ी की भी नहीं है।"

यह जवाब सुनने पर नागराज को एक तरह से संतोष ही हुआ कि विशाल गुप्त ने कृष्णदास को दगा दिया है। उसने वैसे चोरी ज़रूर की हे, लेकिन विशाल गुप्त ने कृष्णदास को जो दगा दिया है, वह तो कहीं अनोखा है।

कृष्णदास ने पुखराज से मुलाक़ात की और उसे बताया कि विशाल गुप्त के साथ उसका परिचय कैसे हुआ है।"

इस पर पुखराज ने कहा—"आप को विशाल गुप्त ने जो हीरा दिया है, वह मुझे देकर उसका मूल्य ले लीजिए।"

"महाशय, उस हीरे को किसी ने चुरा लिया है। मैं उसे बेचने के लिए आप के पास नहीं आया हूँ। आप तो विशाल गुप्त के मित्र हैं, इसलिए केवल आपसे मिलने आया हूँ।" कृष्णदास ने कहा।

लेकिन उसे इस बात का आश्चर्य भी हुआ कि उसे विशाल गुप्त ने जो हीरा दिया था, यह खबर पुखराज को कैसे मिली।

तब पुखराज ने तपाक से पूछा—"मैंने सुना है कि आपके साथ एक और व्यक्ति भी हैं; वे कहाँ?"

"वे तो शहर देखने गये हैं।" कृष्णदास ने जवाब दिया।

इस पर पुखराज ने अपने दो कर्मचारियों को बुलाकर उन्हें अपनी बोली में कुछ बताया। वे दोनों उसी वक़्त चल पड़े और थोड़ी देर में नागराज को साथ लेकर आ पहुँचे।

पुखराज ने अपने कर्मचारियों के द्वारा नागराज की तलाश कराई। उसके पास हीरा मिल गया।

"आप ने जो हीरा खोया है, क्या वह यही है? आप चिंता न कीजिए, क्योंकि यह तो कांच का मनका है। आप के मित्र भी ऐसा ही व्यक्ति है। इसी को सच्चा हीरा समझकर इसकी चोरी की और इस शहर के एक जौहरी के हाथ इसे बेचना चाहा। इसी कारण ये मेरे कर्मचारियों के हाथ में पड़ गये। आप को विशाल गुप्त ने जो हीरा देना चाहा, वह सच्चा हीरा है, जो पहले ही मेरे हाथ पहुंच गया है, मैं उसका मूल्य अभी आपके हाथ नहीं सौंपूंगा। आप के गाँव भिजवा दूंगा। मगर आप के मित्र को न्ययालय में भेजना मेरा कर्तव्य है।" पुखराज ने कृष्णदास से कहा।

"महाशय, इसे मैं कभी मान नहीं सकता। क्योंकि सारी यात्रा में इन्होंने मेरे सुख-दुखों को समान रूप से बांट लिया है। तिस पर आप ने बताया कि इन्होंने जिस चीज़ की चोरी की वह कांच का मनका है। अलावा इसके मैं अपने हीरे के मूल्य में इन्हें भी आधा हिस्सा देने जा रहा हूँ। इसलिए आप कृपया मुझ पर मेहर्बानी करके मेरे मित्र पर चोरी का इलज़ाम न लगाइयेगा।" कृष्णदास ने पुखराज से बिनती की।

इसके बाद सिद्धिपुर पहुँचते ही कृष्णदास को हीरे का मूल्य मिल गया। उसमें से आधा हिस्सा कृष्णदास ने नागराज़ को देना चाहा, मगर नागराज ने बड़ी कृतज्ञता के साथ कृष्णदास से कहा—"दोस्त! आप ने मुझे कारागार की सजा भोगने से बचाया है, बस, यही मेरे लिए सब से बड़ा उपकार है।"

खजाने की खोज

दीनूमहतो इक्का चलाकर अपने दिन बिताता था। एक दिन संध्या के समय जब वह घर लौट रहा था, तब रास्ते के किनारे खड़े हुए एक व्यक्ति ने उससे पूछा कि गाँव से छे मील की दूरी पर स्थित सराय तक इक्का चाहिए, फिर सवेरे तक लौटना है। इस पर दीनू ने मान लिया।

उस बुजुर्ग ने अपने साथ ढक्कन पर कपड़ा बन्धा एक कलश, दो कुदाल और एक फावड़ा भी गाड़ी पर रख लिया। दीनू ने सोचा कि वह बुजुर्ग उजड़ी सराय में कोई खजाने खोदने जा रहा है।

इक्के के सराय तक पहुँचने में काफ़ी वक़्त हो गया। इक्के पर सवार व्यक्ति जब उस कलश को उतारने लगा, तब वह छूटकर नीचे गिर गया और खन् खन् की बड़ी आवाज़ हुई। कलश लुढ़ककर गिर गया था जिससे उसके भीतर के थोड़े से टीकरें बाहर आ गिरे थे।

दीनू ने उस बुजुर्ग से पूछा—"इस आधी रात के वक़्त आप टीकरेंवाला यह कलश यहाँ पर क्यों लाये हैं?"

"मैं सारी बातें तुम्हें इतमीनान से सुनाऊँगा। मुझे तुम्हारी मदद चाहिए!" इन शब्दों के साथ बुजुर्ग ने यों सुनाया:

"मेरा नाम हजारीमल है। मेरे दादा ने समुद्री व्यापार करके काफी धन कमाया। एक बार वे बहुत सा धन लेकर गाँव लौट रहे थे। यहाँ तक पहुँचते-पहुँचते आधी रात हो गई। वे उस दिन रात को यहीं पर ठहर गये। उस रात को डाकुओं ने सराय पर हमला किया। डाकुओं ने अंधाधुंध सब को मार डाला, जो कुछ हाथ लगा, लूटकर ले गये। उन मरे हुए लोगों में मेरे दादा भी एक थे।

सुरेश भार्गव

पौधे रोपने के लिए जो थाला बनाया गया था, उस गड्ढे में गाड़ दिया।'

यह वृत्तांत सुनाकर हजारीमल ने कहा– "सुनो, सराय के पीछे के पेड़ों के नीचे हमें उस ख़जाने को निकालने के लिए खोदना होगा! तुम मेरी मदद करोगे तो तुम्हें उस ख़जाने का तीसरा हिस्सा दूंगा।"

दीनू ने हजारीमल की बात खुशी से मान ली। उसने पूछा–"तब तो ये टीकरोंवाले कलश का क्या मतलब है?"

"अचानक अगर हम इस कलश को साथ ले आयेंगे तो किसी को संदेह हो सकता है! अगर रोज यह कलश हमारे साथ रहा तो कोई भी इस पर ध्यान न देगा। संदूक़ में भरा धन हम इसमें रखकर ले जा सकते हैं।" हजारीमल ने कहा।

इसके बाद दीनू ने घोड़े को एक पेड़ से बांध दिया। तब दोनों कुदाल और फावड़ा लेकर सराय के पीछे चले गये, पेड़ों के थालों के पास दोनों दो अलग दिशाओं में खोदने लगे।

सवेरा होने को था, इसलिए दोनों ने खोदने का काम रोक दिया और दूसरे दिन रात को फिर वहां आने का निश्चय कर लिया। मगर उस रात को दोनों ने जो मेहनत की, उसका उन्हें कोई फल नहीं मिला। गांव लौटने पर दीनू ने

मेरे पिता ने खुरदरी चीज़ों का व्यापार शुरू किया। किसी तरह तकलीफ़ उठाकर मुझे पाला-पोसा और बड़ा किया। वे हाल ही में मर गये।

मेरे पिता सिर्फ़ अपने पीछे एक मकान छोड़ गये हैं। उस मकान को बेचने के ख्याल से मैंने अटारी पर रखे पुराने सामान को निकाला। उसमें मेरे दादा के जमाने की एक क़िताब हाथ लगी। मैं उसके पन्नों को उलटने लगा, एक जगह मेरे दादा ने कुछ लिख रखा था, मैंने उसे प्रढ़ा। उसमें यों लिखा हुआ था– 'सराय को डाकुओं ने घेर लिया। मेरे पास जो कुछ धन था, उसे संदूक़ के साथ

हजारीमल को उसके घर पर उतार दिया और वह अपने घर लौट आया।

"तुम रात भर कहाँ रहे?" दीनू की पत्नी कामाक्षी ने कड़ककर पूछा। दीनू ने सारी बातें सुनाई और कहा–"तुम ये बातें किसी से मत कहो! आज शाम को जाकर मैं फिर थोड़े पेड़ों के थालों के पास खोद डालूँगा। अगर हमारी खुश क़िस्मती से खजाना निकल आया तो उसे हम्हीं रख लेंगे।"

"यह तो सरासर अन्याय है! अन्याय का धन हमें नहीं चाहिए!" कामाक्षी ने दृढ़ स्वर में कहा।

लेकिन दीनू ने अपनी पत्नी की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। वह फिर शाम को उस उजड़ी सराय के पास पहुँचा, अंधेरा फैलने तक थोड़े और पेड़ों के थालों के पास खोदता रहा, जब उसे कुछ हाथ न लगा, तो उन गड्ढों को भरकर घर लौट आया।

उस दिन रात को हजारीमल और दीनू ने सराय के पीछे खोद डाला। यों दो हफ़्ते तक दोनों ने कड़ी मेहनत की, मगर दीनू निद्रा और आहार का भी ठीक से ख्याल किये बिना कड़ी मेहनत करने की वजह से ढीला पड़ गया, दूसरे दिन सवेरे उसे बुखार भी आ गया। उस दिन उसने अपने पड़ोसी के जरिये हजारीमल के पास खबर भेजी–"आज रात को मैं इक्का नहीं ले आ सकता।"

पड़ोसी ने लौटकर बताया कि हजारीमल घर खाली करके शहर चला गया है।

यह खबर सुनते ही दीनू का सिर चकरा गया। हजारीमल अगर अपने परिवार के साथ शहर चला गया है तो इसका मतलब है कि उसे खजाना हाथ लगा है। उसे हजारीमल ने दगा दिया है!

उस बुखार की हालत में भी दीनू उठते-गिरते हजारीमल के घर की ओर दौड़ पड़ा। आखिर वहाँ पहुँचकर देखता क्या है, हजारीमल के घर पर ताला लगा हुआ है। पड़ोसी घर के चबूतरे पर बैठे एक बूढ़े से

दीनू ने हज़ारीमल के बारे में पूछा। उसने बताया–"उसका पागलपन बढ़ चला था, इसलिए इलाज कराने उसे शहर ले गये हैं।"

दीनू ने चकित होकर पूछा–"क्या हज़ारीमल पागल हो गया है?

"क्यों नहीं? वरना अपने दादा के द्वारा खजाने के गाड़ने की बात सोचकर सारे घर को कोई खोद बैठता है? इस पागलपन में पड़कर उसने व्यापार तक करना छोड़ दिया। आखिर उसके हाथ एक कलश तो लगा, मगर उसमें सिवाय टीकरों के कुछ न था। फिर धीरे-धीरे उसका पागलपन बढ़ता गया, इस पर उसकी पत्नी उसे इलाज कराने के लिए शहर ले गई है।" बूढ़े ने समझाया।

तब जाकर सारी बातें दीनू की समझ में आ गईं। उस पाजी की बातों में आकर वह भी उस गड्ढे में गिर गया है। उसी का पागलपन इसे भी छू गया है। आखिर धन महानों को भी पागल बना देता है।

अब दीनू का दिल हल्का हो गया। वह अपने पैर घसीटते घर की ओर चल पड़ा।

तब तक एक खंभे के पीछे छिपी दीनू की पत्नी कामाक्षी बाहर आई और बूढ़े से बोली–"नानाजी, मुझे माफ़ कर दो। मैंने तुमसे झूठ बुलवा दिया।"

"हाँ, बेटी! हज़ारीमल को खजाना हाथ लगा था। वह अपना कर्ज चुकाकर शहर में चला गया है न? तुमने उसे पागल क्यों बताया?" बूढ़े ने पूछा।

कामाक्षी ने सारा समाचार बूढ़े को सुनाकर कहा–"मैं अगर ऐसा न कहूँ तो सचमुच ही मेरा पति पागल हो जाएगा! इस खजाने की बात उठने के पहले वह जो कुछ कमाता था, उससे हम घर भर के लोग आराम से खा-पी लेते थे। सुखी थे, घर में शांति थी! ऐसे व्यक्ति के मन में अगर खजाने का लोभ पैदा हो जाय तो हमें सुख कहाँ से मिल सकता है?" यों जवाब देकर कामाक्षी एक दूसरे रास्ते से अपने घर की ओर चल पड़ी।

आधा धर्म प्रभु!

राजा जयसिंह के दरबार में एक दिन एक गरीब व्यक्ति आ पहुँचा। उसने अपनी बुरी हालत का परिचय देकर जीविका का कोई मार्ग दिखाने की प्रार्थना की। राजा ने उसे थोड़ी बंजर भूमि दिलवाई।

इसके थोड़े दिन बाद राजा और मंत्री अपने वेष बदलकर उस गरीब के घर आये। घर के अहाते में खाट पर बैठे उस गरीब के साथ बातचीत शुरू की। उस गरीब ने आदर के साथ दोनों को खाट पर बिठाया और इधर-उधर की बातें कीं।

मंत्री ने गरीब से पूछा–"हम दोनों इस देश के राजा से कोई मदद पाना चाहते हैं। वे कैसे राजा हैं?"

गरीब ने राजा से जो सहायता पाई थी, उसका समाचार विस्तार से सुनाया और कहा–"हमारे देश के राजा आधे धर्म प्रभु हैं।"

"तुम्हें जिस राजा ने जीविका का आधार दिया, उन्हें तुम आधे धर्म प्रभु क्यों मानते हो?" मंत्री ने फिर पूछा।

"महानुभाव, मैं हिम्मत करके राजा के दरबार में पहुँचा। उन्हें मैंने अपनी तकलीफ़ें इस तरह बताईं जिससे वे समझ सकें। तभी जाकर उन्होंने मुझे जमीन दी। लेकिन इस देश में मेरे जैसे गरीब भारी संख्या में हैं। क्या वे सब राजदरबार में पहुँचने की हिम्मत कर सकते हैं? अपनी तक़लीफ़ें उन्हें सुनाने की ताक़त रखते हैं? अगर राजा पूरे अर्थ में धर्म प्रभु हैं तो वे खुद प्रजा की तक़लीफ़ समझकर जो जमीन बंजर पड़ी हुई है, उसे गरीबों में दान कर सकते हैं न?" गरीब ने समझाया।

इसके बाद राजा ने कई हजार एकड़ बंजर भूमि गरीबों में दान कर दी।

महादेवपुर में शंकरगुप्त नामक एक व्यापारी था। वह मिलावट का व्यापार करता था, फिर भी अपनी चातुरी से साधारण लोगों को अपने विश्वास में लेकर खूब धन कमाता था। इस कारण उसकी ईमानदारी पर कोई संदेह नहीं करता था। कोई उस पर संदेह भी करता तो अपनी वाकचातुरी से उनमें ऐसी भावना पैदा करता जिससे वे लोग स्वयं अनुभव करते कि यह तो उन्हीं की भूल है।

उस गांव के मुखिये को जब तब कुछ ऐसे समाचार मिल जाते थे जिससे उसके मन में भी यह शंका पैदा हो गई कि शंकरगुप्त अपनी चीज़ों में मिलावट कर देता है, लेकिन उसके सबूत मिलते न थे। इस कारण मुखिये ने सच्ची बात जानने का निश्चय कर लिया।

आखिर एक दिन मुखिया शंकरगुप्त की दूकान से घी खरीदने का इरादा करके उसकी दूकान गया। शंकरगुप्त दूकान के अन्दर चला गया, थोड़ी देर बाद घी में डुबोई गई तीन उंगलियों के साथ लौट आया। मुखिया शिवसिंह को एक-एक उंगली दिखाते हुए बोला–"अजी, देखिये, इस क़िस्म का घी गाय का शुद्ध घी है। यह प्रथम श्रेणी का घी है। यह तो दूसरे क़िस्म का घी है। यह तो पहले क़िस्म के घी जैसा बढ़िया तो नहीं है, मगर दूसरों की दूकानों में जो पहले क़िस्म का घी मिलता है, उसकी तुलना में किसी हालत में कम श्रेष्ठ नहीं है। अब तीसरे क़िस्म के घी के बारे में विशेष रूप से कुछ कहने की जरूरत नहीं है। यह घी इसलिए हम बेचते हैं कि जो लोग कम दाम में अच्छे क़िस्म का घी चाहते हैं,

विनोद कुमार

उनके वास्ते ला रखा है। अब आप बताइये, इनमें से आप किस क़िस्म का घी चाहते हैं?"

तीनों क़िस्म के घी की जांच करने बाद मुखिये को लगा कि इनमें थोड़ा भी फ़रक़ नहीं है, दाम भी दूसरी दूकानों से ज़्यादा है, यही बात मुखिये ने बताई।

"अजी साहब, आप यह क्या कहते हैं? मैंने तीनों प्रकार के घी को तीन अलग-अलग बर्तनों में रखवाया है। अगर आपको मुझपर विश्वास नहीं है तो अन्दर आकर देख सकते हैं।" शंकरगुप्त ने कहा। उसका विश्वास था कि अंधेरी व माल से खचखच भरी उस कोठरी में मुखिया किसी भी हालत में क़दम न रखेगा।

"ओह! तुम इतने वर्षों से इस गाँव में व्यापार करते हो, तुम पर हमें संदेह क्यों होगा?" यों कहकर मुखिया तीसरे क़िस्म का थोड़ा घी ख़रीदकर चला गया।

दर असल शंकरगुप्त के पास एक ही क़िस्म का घी था। उसी घी को वह तीन प्रकार से दिखाकर ग्राहक किसी भी क़िस्म का घी ख़रीद ले, उसे नुकसान न हो, इस तरह का भाव रखता। इसके पीछे जो दगा था, उसका पता न लगने की वजह से शंकरगुप्त की ईमानदारी के प्रति कोई शंका नहीं करता था।

दूसरे दिन शंकरगुप्त मुखिया शिवसिंह के घर दौड़ा दौड़ा आ पहुँचा और बोला— "मुखिया साहब, कल रात को मेरी दूकान
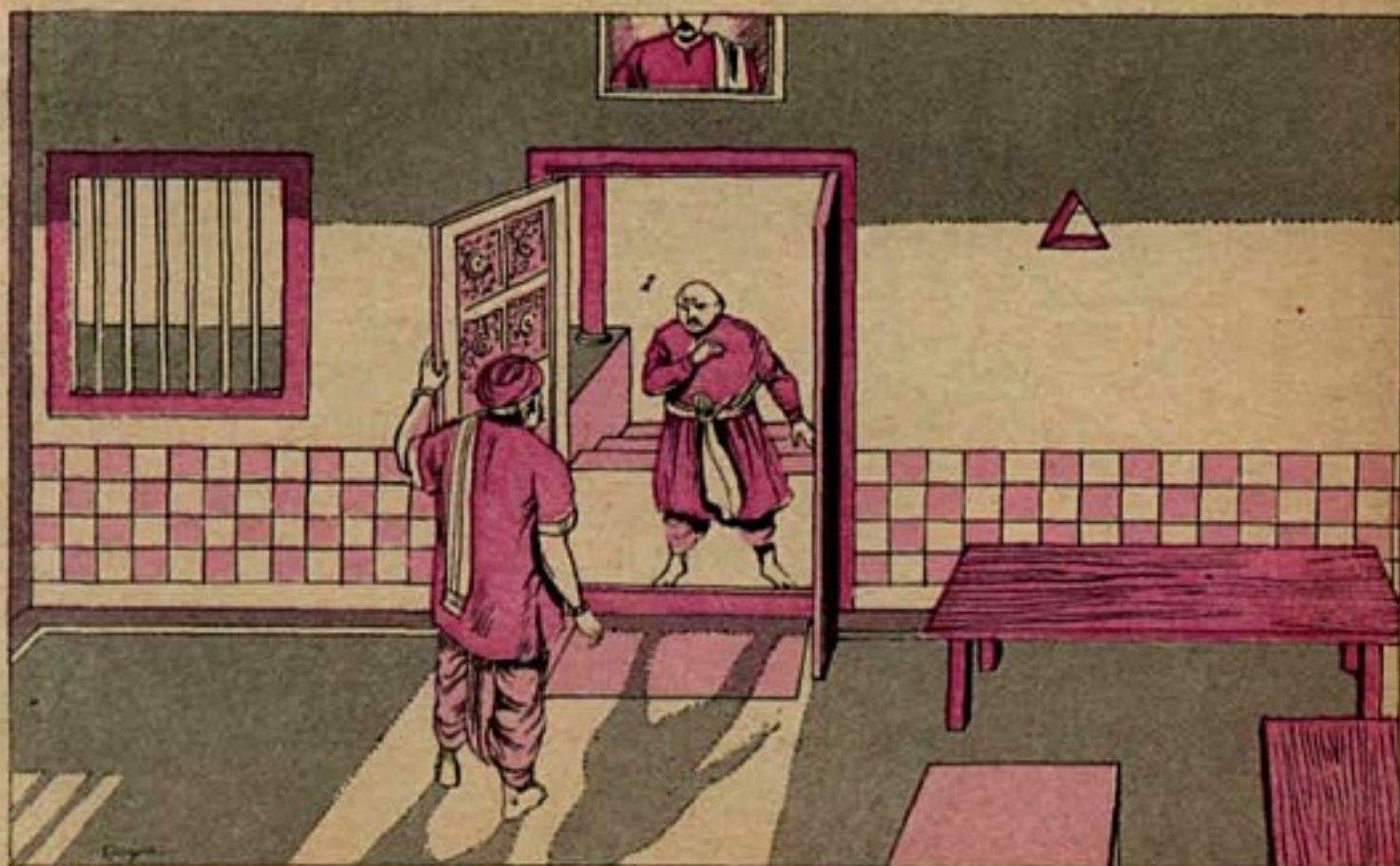
में चोरी हो गई है। मेहर्बानी करके आप किसी तरह से चोर को पकड़वा कर मेरा माल वापस दिलवा दीजिए।"

"अच्छी बात है। असली चोर को पकड़ने की कोशिश करूँगा। मगर तुमने यह नहीं बताया कि क्या-क्या चीजें चोरी गई हैं?" मुखिये ने पूछा।

"चावल का एक बोरा, एक घी का बर्तन और कुछ तौल के बाट चोरी गये हैं। आप किसी तरह उन्हें मुझे दिलवाने का प्रबंध कीजिए।" शंकरगुप्त ने बिनती की।

"तो बाक़ी सारा माल जहाँ रखा गया, वहीं पर सुरक्षित है न?" मुखिये ने पूछा।

"जी हाँ, आप जाँच कर देखिए।" यों शंकरगुप्त ने मुखिया शिवसिंह को अपनी दूकान में आने का अनुरोध किया।

मुखिया शिवसिंह दूकान में पहुँचा, सारे माल की जाँच करते हुए बोला—"कल तुमने बताया कि तुम्हारी दूकान में घी के तीन बर्तन हैं। अगर एक बर्तन को चोर चुरा ले गये हैं तो बाक़ी दो बर्तन कहाँ हैं? वे दोनों बर्तन यहाँ पर दिखाई नहीं दे रहे हैं?"

शंकरगुप्त के गले में बात अटक गई। वह कुछ कहने को हुआ, मगर मुखिये ने उसे टोकते हुए कहा—"शंकरगुप्त, आख़िर तुम गाँव के भोले लोगों को कितने दिन तक दगा दे सकते हो? तुम पर मुझे संदेह हुआ। कल रात को गाँव के मुखिये के ओहदे में मैंने तुम्हारी दूकान का थोड़ा माल निकलवाकर पंचायत के गोदाम में रखवाया है। तुम चावल, अरहर की दाल में मिलावट करते हो और तौल के बाटों तथा माप में भी धोखा देते हो; यह बात अच्छी तरह से साबित हो चुकी है। तुमने इस तरह जो दगा दिया, उस अपराध के दण्ड के रूप में मैं तुम्हें बारह सौ रुपयों का जुर्माना लगा देता हूँ। आइंदा तुम इस गाँव में व्यापार नहीं कर सकते।" यों समझाकर मुखिया अपने घर चला गया।

त्वष्टू ने वृत्र को आदेश दिया कि वह किसी भी प्रकार से इन्द्र का वध करे। इस पर वृत्र रथ पर सवार हो भारी सेना के साथ चल पड़ा। इन्द्र फिर से वृत्र के साथ युद्ध करने के लिए तैयार हो गये।

इन्द्र और वृत्र के बीच भारी युद्ध हुआ। उस युद्ध में वृत्र ने इन्द्र को बन्दी बनाया और उन्हें अपने मुँह में डाल लिया।

इसे देख देवता विलाप कर उठे और बृहस्पति के पास पहुँचकर इन्द्र के मुक्त होने का उपाय पूछा।

बृहस्पति ने उन्हें शांत स्वर में समझाया– "देवताओ, इस कार्य में मैं भी आखिर क्या कर सकता हूँ? लेकिन एक बात है, इन्द्र मरे नहीं, वृत्र के मुंह में प्राणों के साथ जीवित हैं।"

इस पर देवताओं ने परस्पर सलाह-मशविरा करके जृंभिका नामक शक्ति की सृष्टि की। उस शक्ति ने वृत्र में प्रवेश करके उसमें जंभाई पैदा की। वृत्र के मुँह खोलते ही इन्द्र बाहर कूद पड़े। इस तरह वे बचकर बाहर निकल आये।

इसके बाद दीर्घ काल तक युद्ध चलता रहा। उस युद्ध में इन्द्र पूर्ण रूप से हार गये और वे असहाय बन गये। वृत्र ने अमरावती में प्रवेश करके वहाँ की सारी संपत्तियों को अपने अधीन में ले लिया।

अपने पुत्र को स्वर्ग का राजा बने देख त्वष्टू परमानंदित हुए। देवता यज्ञ का

१८. वृत्र की कहानी

अंश खोकर जंगलों में जहाँ-तहाँ भाग गये। इस तरह देवताओं का नगर राक्षसों का नगर बन गया।

इसके बाद देवताओं ने जाकर शिवजी से अपनी विपदा बताई। उन लोगों ने कहा–"भगवन, हम आप की शरण में आये हैं। आप हमारी रक्षा करें!"

शिवजी ने साधारण ढंग से समझाया–"हम ब्रह्मा को साथ लेकर विष्णु के पास जायेंगे। वे ही वृत्र का वध करेंगे।"

इस पर सब लोग वैकुंठ में पहुँचे। विष्णु ने उन्हें दर्शन देकर पूछा–"आप सब लोग यहाँ पर आये हैं, आखिर बात क्या है?"

सब को चिंता मग्न देख विष्णु ने फिर पूछा–"आप लोग अपनी विपदा बताइये, तब हम उसे दूर करने का मार्ग बतायेंगे।"

देवताओं ने अपनी विपदा बताई। उनसे विष्णु ने यों बताया–"हाँ, आप लोगों पर जो विपदा आ पड़ी है, उसे मैं जानता हूँ। वृत्र को किसी भी उपाय से मारने का तंत्र सोचकर मैं आप लोगों को बताऊँगा। ब्रह्मा के द्वारा प्राप्त वरदानों से घमण्डी बनकर किसी के द्वारा मृत्यु न होने की वजह से वृत्र नियंता जैसा व्यवहार कर रहा है। आप लोग वृत्र और इन्द्र के बीच मैत्री पैदा कीजिए। मैं अदृश्य रूप में वज्रायुध में रहकर आप लोगों की मदद करूँगा।. किस कपट के द्वारा उसे इन्द्र के साथ मैत्री भाव पैदा करना संभव होगा, वैसे कपट का प्रयोग कीजिए। किसी भी उपाय से उसे विश्वास दिलाइये। इसके बाद इन्द्र युक्तिपूर्वक उसे मार डालेंगे। क्या मैंने इसके पूर्व कई कपट नहीं किये? वामन के रूप में जाकर क्या मैंने बलि को धोखा नहीं दिया? मोहिनी के रूप में जाकर क्या मैंने दानवों के साथ दगा नहीं किया? फिर भी आप लोग एक काम कीजिए; आप लोग समस्त कामनाओं की पूर्ति करनेवाली जगज्जननी की प्रार्थना कीजिए!

वे अपनी योगमाया के द्वारा आप लोगों की सहायता करेंगी। उनकी माया के अधीन होकर वृत्र इन्द्र के हाथों में मृत्यु को प्राप्त होगा। आप लोग भी जगज्जननी की मदद से वृत्र का वध कीजिए।"

इस पर देवता कल्प वृक्षों से भरे मेरु पर्वत पर पहुँचे और महादेवी का ध्यान किया। उन लोगों ने देवीजी को बताया कि इसके पूर्व उन्होंने महिषासुर, शुंभ-निशुंभ तथा अन्य राक्षसों का वध करके देवताओं की कैसी सहायता की, तब निवेदन किया–"माताजी! यह वृत्र राक्षस आप का भी शत्रु होगा। वरना आप के भक्त हुए हम सब को यों क्यों सताता है?"

देवताओं की प्रस्तुति पर प्रसन्न हो महादेवी अपने आभूषणों, तीन आँखों, चार हाथों, दिव्य आयुधों, लाल चन्दन वर्ण के वस्त्र धारण कर उनके सामने प्रत्यक्ष हो गईं। तब देवताओं की सहायता करने का वचन देकर वे अदृश्य हो गईं।

देवता संतुष्ट होकर लौट आये, इन्द्र के साथ वृत्र की मैत्री करने के लिए मनवाने के हेतु मुनियों को वृत्र के पास भेजा।

मुनियों ने वृत्र के पास जाकर यों कहा: "वृत्र, तुम महान योग्य हो! इन्द्र भी महान व्यक्ति कहलवाये हैं। ऐसी हालत में आप दोनों मैत्रीपूर्वक रहें तो कहना ही क्या? इन्द्र आप के सामने मैत्री भाव की शपथ लेंगे। आप भी ऐसी ही शपथ लीजिएगा। मुनि सब आप दोनों के बीच गवाह रहेंगे।"

मुनियों की बातें सुन वृत्र बोला–"आप लोगों के प्रति मेरे दिल में अपार आदर का भाव है। आप लोगों की बात का मैं तिरस्कार नहीं कर सकता। लेकिन पापी और ब्रह्महत्या करनेवाले इन्द्र के प्रति मैं कैसे विश्वास कर सकता हूँ?"

इस पर मुनि बोले–"जो व्यक्ति अपराध करता है, उसका फल उसी को भोगना पड़ता है। ब्रह्महत्या के पाप तथा मद्यपान के अपराधों के लिए प्रायश्चित

नहीं है। इस कारण आप और इन्द्र शपथपूर्वक स्नेह कर सकते हैं।"

"गीले, सूखे, पत्थर, लाठी, कठोर वज्र से, दिन और रात के समयों में भी, देवता तथा उनके अधिपति बने इन्द्र के द्वारा मेरा वध करना संभव न हो। इन शर्तों में अगर आप लोगों को कोई आपत्ति न हो, तो मैं आप लोगों की बात मान सकता हूँ।" वृत्र ने कहा।

मुनियों ने जाकर यह बात इन्द्र को बताई। अग्नि को साक्षी बनाकर ये शर्तें स्वीकार कर लीं, तब उनकी बातों पर विश्वास करके वृत्र ने इंद्र के साथ मैत्री कर ली।

इसके बाद दोनों मैत्रीपूर्वक समुद्र के तट पर और नंदनवन में भी घूमने लगे। वृत्र भी इन्द्र की मित्रता पर संतुष्ट हुए। मगर इन्द्र वृत्र का संहार करने के लिए बड़ी उत्सुकता के साथ उचित मौक़े का इंतजार करने लगे।

अपने पुत्र को इन्द्र के साथ मैत्री करने का समाचार सुनकर त्वष्टू अत्यंत आश्चर्य में आ गये। तब अपने पुत्र के पास जाकर बोले—"तुमने इन्द्र की बातों पर कैसे विश्वास किया? सब लोगों को अपने ही समान विश्वासपात्र मान लेना गलत बात है। अत्यंत पागल भी क्या दुश्मन की बातों पर यक़ीन करेगा? तिस पर भी मौक़ा मिलने पर विश्वासघात करनेवाला व्यक्ति धर्म का साथ देगा?"

इस प्रकार त्वष्टू ने कई प्रकार से वृत्र को समझाया, पर ये बातें उसके दिमाग में नहीं घुसीं।

एक दिन संध्या के समय इन्द्र और वृत्र समुद्र के तट पर टहल रहे थे। वह न रात थी और न दिन। अलावा इसके वृत्र अकेला ही था। इसलिए इन्द्र ने सोचा कि वृत्र का वध करने के लिए यही अच्छा मौक़ा है। उन्होंने विष्णु का स्मरण किया। विष्णु ने अदृश्य रूप में आकर वज्रायुध में प्रवेश किया। इन्द्र को समुद्र

का फेन दिखाई दिया। वह न तर था और न सूखा ही था और न किसी प्रकार का आयुध ही था। इन्द्र ने महादेवी का स्मरण किया। महादेवी ने अपने अंश को फेन में प्रवेश कराया। इन्द्र ने अपने वज्रायुध को फेन से ढक दिया और वृत्र पर सारी शक्ति लगाकर फेंक दिया। उस प्रहार से वृत्र ने पहाड़ की भांति टूटकर अपने प्राण त्याग दिये।

इस पर अपने शत्रु-भय से मुक्त होकर इन्द्र अमरावती को लौट आये। मुनियों ने उनके स्त्तोत्र किये। महादेवी के लिए उत्सव मनाया। नंदनवन में महादेवी के वास्ते मंदिर बनाकर उनकी मूर्ति प्रतिष्ठापित की। इसके बाद समस्त देवताओं के साथ मिलकर अपनी सहायता करनेवाले विष्णु की पूजा की। यों तो वृत्र का संहार महादेवी, विष्णु और इन्द्र ने मिलकर किया, पर उसका यश इन्द्र को ही प्राप्त हुआ। इसके बाद विष्णु वहाँ से चले गये।

मगर इन्द्र के मन में यह डर बना रहा कि उन्होंने मित्र-द्रोह किया है। उस पाप में मुनियों तथा विष्णु का भी हिस्सा था। इस कारण मुनि भी भयभीत हो गये। अपनी करनी पर पश्चात्ताप करते मुनि सब अपने अपने आश्रमों को लौट गये।

अपने एक और पुत्र की मृत्यु पर त्वष्टू दुखी हुए, पुत्र की अत्येष्ठि क्रियाएँ करके धोखे के साथ वृत्र का संहार करने के अपराध के लिए इन्द्र को उन्होंने शाप दिया कि वे भयंकर यातनाएँ भोगें।

पाप का फल भोगना पड़ता है। वृत्र को मारने के बाद इन्द्र का तेज जाता रहा। देवता लोग 'इन्द्र कृतघ्न' हैं, कहते उनका मजाक उड़ाने लगे। अपनी शपथ को तोड़कर मित्रघाती बनने की वजह से इन्द्र जैसे पापी तीनों लोकों में नहीं हैं, यह कहते सर्वत्र लोग उनकी निंदा करने लगे। मुनियों के बीच भी इन्द्र का अनादर होने लगा।

इन सभी कारणों से इन्द्र अपनी सभा में जाकर बैठ न पाये, वे सदा दुखी रहते घर में ही बैठते थे। इसे देख उनकी पत्नी शचीदेवी ने इन्द्र से पूछा—"आप तो अपने शत्रु के भय से मुक्त हो गये हैं, फिर भी सुखी क्यों नहीं हैं? ऐसे कोई दूसरे शत्रु नहीं हैं न?"

इन्द्र ने शचीदेवी से कहा—"इस समय मुझे शत्रु का भय तो नहीं है, मगर ब्रह्महत्या का भय मुझे सता रहा है। नंदन वन, अमृत, गंधर्वों का संगीत, अप्सराओं के नृत्य, तुम, अन्य नारियों, कामधेनु, कल्पवृक्ष—ये सब मुझे इस समय सुख पहुँचा नहीं सकते।" यों अपनी हालत बताने के बाद इन्द्र मानस सरोवर के पास पहुँचे, सबकी आँख बचाकर एक कमल-नाल में प्रवेश किया और जल-सर्प के रूप में संचार करने लगे।

इस कारण सारे संसार में अराजकता फैल गई। उस हालत को दूर करने के लिए देवता और मुनियों ने आपस में मंत्रणा करके इन्द्र पद के लिए नहुष को चुना। नहुष स्वभाव से धर्मात्मा थे; पर अधिकार के मद में आकर वे सुख-भोगों में डूब गये। उन्हें मालूम हुआ कि शचीदेवी बड़ी सुंदर है। इस पर नहुष ने ऋषियों को बुलवाकर आदेश दिया—"अब तो मैं देवताओं का राजा हूँ। मेरी सेवा करने के लिए इन्द्र की पत्नी क्यों नहीं आतीं? उनको बुलवा भेजिए।"

ये बातें सुन मुनि चौंक पड़े, शची देवी के पास जाकर यह समाचार सुनाया। शची देवी ने बृहस्पति के पास पहुँच कर अपनी रक्षा करने का निवेदन किया। बृहस्पति ने शची देवी को अभय दान दिया। मगर ऋषियों ने शची देवी को नहुष के पास ले जाने का अपना निर्णय सुनाया। क्योंकि वे नहुष से डरते थे। तब बृहस्पति ने शची देवी को एक उपाय बताकर उसको ऋषियों के साथ नहुष के पास भेजा।

शची देवी ने नहुष को बताया–"अपने पति का पता लगने पर ही में आपकी पत्नी बन सकती हूँ। उनका समाचार मिलने तक आप रुक जाइये।"

नहुष ने शची की बात मान ली। शची की ओर से देवताओं ने विष्णु के पास जाकर इन्द्र का पता पूछा। विष्णु ने समझाया–"आप लोग अश्वमेध याग करके जगदंबा को प्रसन्न कीजिए, तब इन्द्र फिर से आपके राजा बन जायेंगे। शचीदेवी इस प्रकार अपने पति को फिर से पा सकेंगी।"

देवताओं ने इन्द्र का पता लगा कर उनके द्वारा अश्वमेध याग कराया। फिर भी वे लौट न आये। इस पर शची ने दुखी होकर बृहस्पति से इसका कारण पूछा। बृहस्पति ने शची को सलाह दी कि वह महादेवी की आराधना करे। शची ने ऐसा ही किया। देवी ने प्रत्यक्ष होकर बताया कि उनकी माया से नहुष मृत्यु को प्राप्त होगा, फिर शची के इन्द्र के पास जाने का उचित प्रबंध भी किया।

शची ने इन्द्र के पास पहुँच कर सारा वृत्तांत बताया, यह भी बताया कि नहुष उस पर आसक्त है। इन्द्र ने सलाह दी–"तुम नहुष से कहो कि वह ऋषियों के द्वारा ढोनेवाली पालकी में तुम्हारे पास आवे। वह कामी इस बीच ऋषियों के शाप का शिकार हो जाएगा।

यह चाल चल गई। शची देवी को अपनी पत्नी बनाने के लिए नहुष ने ऋषियों को आदेश दिया कि वे उनका वाहन ढोवे, बाक़ी मुनि उसके साथ चले। ऋषि और मुनियों ने नहुष की बात मान ली। मगर वे तेज़ी से चल न पाये, यह आरोप लगाकर नहुष ने "सर्प! सर्प!" कहते अगत्स्य पर लात मारी।

अगत्स्य ने क्रोध में आकर नहुष को शाप दिया–"तुम्ही सर्प बन जाओ।" इस शाप के कारण नहुष ने सर्प का रूप प्राप्त किया और स्वर्ग से पृथ्वी पर गिर पड़ा।

इस प्रकार इन्द्र फिर से स्वर्ग के अधिपति बन बैठे।
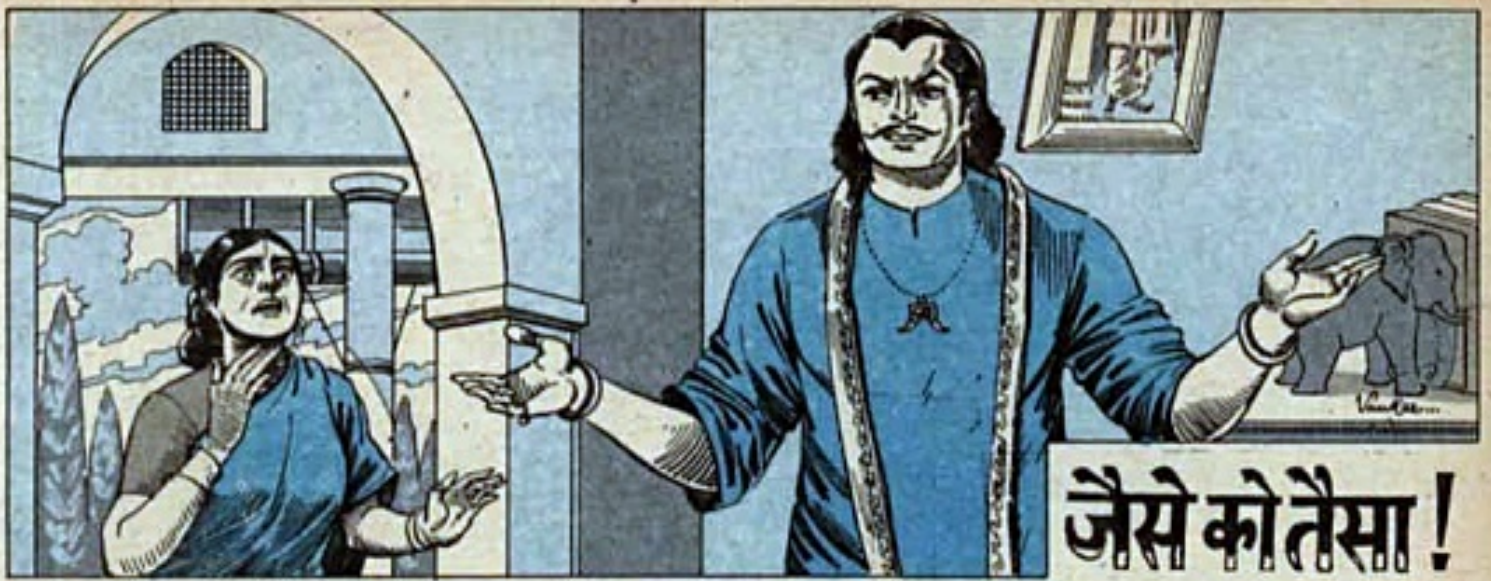
जैसे को तैसा!

भोलानाथ की अचानक मृत्यु हो जाने से उसकी पत्नी और उसके दस साल का लड़का गोपाल अनाथ हो गये। अगर संपत्ति के नाम कुछ बच रहा तो एक मकान और एक एकड़ जमीन ही।

भोलानाथ का खेत धनंजय नामक एक धनी किसान के खेत से सटा हुआ था। पर भोलानाथ के रहते उसने अपना खेत बेचने से साफ़ इनकार किया था। अब उसकी पत्नी और बेटा असाहय थे। भोलानाथ तो कड़ी मेहनत करके उस खेत में थोड़ी-बहुत फसल पैदा कर लेता था। धनंजय ने उस खेत के लिए ज्यादा क़ीमत देने का लोभ दिखाकर उसे अपने खेत में मिला लिया।

इसके बाद धनंजय ने गोपाल की माँ को समझाया—"तुम्हारे खेत के रुपये मेरे ही पास रहने दो। मैं उसे ब्याज पर दूंगा, तुम जब चाहे तब ले सकती हो! इस बीच तुम्हारा बेटा भी बड़ा हो जाएगा, अगर ये रुपये तुम्हारे पास रहे तो कोई सूद पर लेकर तुम्हें दगा देगा!"

भोलानाथ की पत्नी ने धनंजय की बातों पर यक़ीन करके अपने रुपये उसी के यहाँ रख लिये। अपनी मेहनत की कमाई से बेटे को पढ़ाने लगी। गोपाल जब बड़ा हुआ, तब शहर में जाकर ऊँची शिक्षा प्राप्त करनी चाही, इस कारण उसकी माँ ने धनंजय के पास जाकर अपने रुपये वापस मांगे।

धनंजय ने आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा—"तुमने मेरे पास रुपये कब दिये?"

यह जवाब सुनकर भोलानाथ की पत्नी अचंभे में आ गई। जिस धनंजय ने यह कहा था कि कोई उसे धोखा देगा, वही आज उसे दगा दे रहा है! उसने धनंजय

यशवंत रांका

से कई बार गिड़गिड़ाकर पूछा, आखिर उससे अपमानित भी हुई ।

यह बात मालूम होने पर गोपाल गुस्से में आ गया । उसने अपनी माँ से कहा—"इस दुष्ट की बातों पर विश्वास करके इसके यहाँ रुपये रखना, हमारी ही भूल थी । इस को बदले में हमें उसे अच्छा सबक़ सिखलाना होगा ।"

गोपाल के अनंत नामक एक दोस्त था । अनंत का बाप सुनार था । वह गहने बनाने में अपना सानी नहीं रखता था । गोपाल ने सारी कहानी अनंत के पिता को समझाई और उसके यहाँ से कुछ पुराने गहने लिये ।

रोज शाम को गाँव के बुजुर्ग धनंजय के यहाँ जाकर दुनियादारी की बातें किया करते हैं । एक ऐसा ही मौक़ा देख गोपाल गहने लेकर धनंजय के पास आ पहुँचा । धनंजय गोपाल को देखते ही यह सोचकर घबड़ा गया कि वह सभी बुजुर्गों के सामन अपने रुपये माँगकर उसका अपमान करेगा । मगर गोपाल ने रुपयों की बात नहीं उठाई । अपने लाये हुए सारे गहने गाँव के बुजुर्गों के सामने धनंजय के हाथ देकर बोला—"ये मेरी माताजी के पुराने गहने हैं । मुझे इस वक़्त अपनी पढ़ाई के लिए रुपयों की ज़रूरत आ पड़ी है । ये गिरवी रखकर क्या आप मुझे रुपये दे सकते हैं?"

"ओह, ऐसी बात है! तुम पढ़ाई के वास्ते रुपये चाहते हो? जितने चाहे उतने लेते जाओ ।" यों धनंजय ने सभी बुजुर्गों के सामने अपनी उदारता प्रकट की ।

"आप सिर्फ़ पांच सौ रुपये दे दीजिएगा ।" गोपाल ने पूछा ।

इस पर धनंजय ने उसे रुपये देकर भेज दिया ।

दूसरे दिन धनंजय ने अनंत के पिता को ही बुलवाकर उनकी क़ीमत जोड़ने को कहा ।

सुनार ने गहनों को परखकर देखा और बोला—"ये तो हमारे जमीन्दार के

गहने जैसे हैं। हाँ, हाँ; इसमें संदेह ही क्या है? वे ही गहने हैं! बहुत दिन पहले मैंने ही बना करके दिये। मालूम हुआ है कि चार दिन पहले उनके घर गहने चोरी गये हैं, शायद ये ही हो!"

ये बातें सुन धनंजय का दिल कांप उठा। तभी सुनार बोला–"चोरी का माल आप जैसे बुजुर्गों के घर रखना अच्छी बात नहीं है! जिससे आप को ये गहने मिले, उसी को लौटाकर हाथ धो लीजिए! वरना आप मुसीबत में फँस जायेंगे।"

सुनार के चले जाने पर धनंजय ने गोपाल को बुला भेजा और कहा–"मुझे रुपयों की सख्त ज़रूरत आ पड़ी है। तुम अपने गहने लेकर मेरे रुपये लौटा दो। तुम्हें ब्याज देने की जरूरत नहीं है।"

गोपाल ने गहने अपने हाथ में ले लिये और कहा–"उफ़! मैंने तो रुपये खर्च कर डाले हैं! चार दिन रुक जाइये, दे दूँगा।"

धनंजय ने सोचा कि पहले गहनों से पिंड छूट जाय तो भला होगा! इसलिए गोपाल की बात मान ली।

एक हफ़्ता बीत गया। धनंजय जब कई बुजुर्गों के साथ बात कर रहा था, तब गोपाल ने प्रवेश करके पूछा–"मैं आप के रुपये ले आया हूँ; मेरे गहने वापस कर दीजिए।"

धनंजय पल भर के लिए चकित रह गया। फिर संभलकर बोला–"तुम्हारे गहने मैंने तभी लौटा दिये है न?"

गोपाल ने आश्चर्य का अभिनय करते कहा–"मैंने अपने गहने कब वापस लिये? आप से जिस दिन मैंने रुपये लिये, उसी दिन मैं शहर में चला गया, आज ही तो शहर से लौटा हूँ। आप क्या पाँच हजार रुपयों की क़ीमत के गहने हड़पना चाहते हैं? इससे बढ़कर कहीं कोई अन्याय की बात हो सकती है?" बुजुर्गों की ओर मुड़कर पूछा।

वे ही बुजुर्ग गोपाल के गवाह थे। धनंजय ने सोचा था कि गोपाल को रुपये देते वक़्त वे सारे बुजुर्ग गवाह हैं, इसलिए उसके रुपयों के लिए कोई खतरा नहीं है, मगर उसने यह नहीं सोचा था कि उन्हीं लोगों की गवाही उसके लिए उल्टी भी साबित हो सकती है।

इस पर बुजुर्गों ने धनंजय की ओर तीव्र दृष्टि से देखा। एक बुजुर्ग ने यहाँ तक कह दिया–"अजी, आप भी कैसे बुजुर्ग ठहरें! इस युवक ने आप के पास अपने गहने गिरवी रखे, इसे हम सबने अपनी आँखों से देखा है। उसने कर्ज चुकाया नहीं, इसके पहले ही आप बताते हैं कि इसके गहने लौटा दिये हैं। क्या आप की इस बात पर कोई यक़ीन भी कर सकता?"

धनंजय से रहा नहीं गया, वह क्रोध में आकर चीख उठा–"वे तो चोरी के गहने थे। जमीन्दार साहब के हैं। इस युवक ने किसी तरह से चुराकर मेरे पास गिरवी रखे। यह बात मालूम होते ही मैंने इसे वे गहने लौटा दिये हैं।"

सब ने गोपाल की ओर शंका भरी नज़र दौड़ाई। उसी वक़्त अनंत के पिता ने आकर पूछा–"महाशय, गहनों की मजदूरी दिला देंगे?"

धनंजय ने जल भुनकर पूछा–"किन गहनों के बनाने की मजूरी?"

"अजी साहब, नाराज क्यों होते हैं? आप के पुराने गहने गलाकर नये बनवाकर दिये हैं न?, उसकी मज़ूरी घर आकर

ले जाने को बताया था न? क्या इतनी जल्दी भूल गये?"

ये बातें सुनने पर धनंजय को लगा कि वह पागल होता जा रहा है। उसके साथ जो धोखा हुआ, वह उसकी समझ में आ गया। लेकिन वह क्या कर सकता था? यह बात स्पष्ट बता भी दे कि इसी सुनार ने उन गहनों को चोरी के गहने बताकर डराया और गोपाल को वापस दिलाया, तो कौन यक़ीन करेगा? लोग यही समझेंगे कि सुनार की मजूरी हड़पने के लिए मैं यह आरोप लगा रहा हूँ।

चाहे, जो हो, वहाँ के सभी बुजुर्गों के मन में यह धारणा अच्छी तरह से बैठ गई कि गोपाल ने उन सबके देखते जो पुराने गहने धनंजय के हाथ दिये, उन्हें सुनार के द्वारा गलवाकर नये गहने बनवा लिये हैं। इस पर सबने धनंजय को डांटते हुए कहा—"आज तक हमने आप का इसीलिए आदर किया कि आप एक मोतबर किसान और बड़े बुजुर्ग हैं, मगर हमने कभी यह नहीं सोचा था कि आप यों लोगों को धोखा भी देते हैं! इसलिए आप इस युवक के गहने इसी वक़्त वापस कर दीजिए! उन्हें गलवाकर नये गहने बनानेवाला आदमी यहीं पर है, वही बतायेगा कि उसने क्या क्या गहने बनाकर दिये हैं?"

धनंजय ने कल्पना तक नहीं की थी कि रुपयों के लोभ में पड़कर दगा देने से यों सब के सामने अपमानित भी होना पड़ेगा। अब वे गहने वह कहाँ से ला देगा?

गोपाल को धनंजय की हालत पर दया आ गई। उसने बुजुर्गों की ओर देख कहा—"महानुभावो, धनंजय साहब ने प्यार से जो गहने बनवा लिये, वे गहने मैं नहीं चाहता। मुझे सिर्फ़ उसके सोने की क़ीमत दिलवा दीजिए। गहने बनानेवाले सुनार साहब भी यहीं पर हैं, सोने की क़ीमत ये ही बता देंगे।"

इसके बाद धनंजय ने गोपाल को पाँच हजार नक़द देकर अपने को ऋण मुक्त करवा लिया।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां जून १९८० के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

★

P. Balasubramanian

Pranlal K. Patel

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों ।

★ अप्रैल १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा ।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा ।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसम न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

फरवरी के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : कबूतर है जहाँ शांति दूत !

द्वितीय फोटो : हय है वहाँ क्रांति दूत ! !

प्रेषक : श्री अनिलकुमार पांडेय, १४१, मुडयाँडीह पत्रालय एग्रिको, जमशेदपुर - ९

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी ।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor : NAGI REDDI.

स्वयंवर

सेठ रतनलाल ने जो समृद्धि प्राप्त की थी वह उनके अपने ही प्रयत्नों का फल था। भाग्य से उन्हें लड़के भी मिले जैसे राम-लक्ष्मण की जोड़ी—उनके नाम भी थे राम और लक्ष्मण। वे न केवल सशिक्षित और बुद्धिमान थे बल्कि पितृभक्त भी थे। उनके पिता की बस एक ही इच्छा थी कि उनका विवाह हो जाए और वे सुखी रहे।

यह अमीरचंद भार्गव की कृपा और आशीर्वाद का फल था कि सेठ रतनलाल आज इतने समृद्ध थे। सेठ की इच्छा थी कि वे किसी प्रकार उनके ऋण से अऋण हो सकें। परन्तु उनका समय अधिकतर विदेशों में ही व्यतीत हुआ था, उनको क्या खबर कि भार्गव अब नहीं रहे!

यह दुखद समाचार उन्हें एक पुरोहित से मिला जो उनके दो बेटों की शादी के लिये पैगाम लेकर आया था। भार्गव की पत्नी चल बसी थीं। अपनी मासूम बच्ची शांति के लालन-पालन के लिये उन्हें दूसरा विवाह करना पड़ा। परन्तु अपनी दूसरी पत्नी दुर्गादेवी से उन्हें जो आशा थी वह पूरी न हो सकी। उसने अपनी बेटी रूपा को तो सिर पर चढ़ा दिया था पर शांति से वह दासी का सा व्यवहार करती थी! इसमें उसका साक्षी और सहायक था मक्खनलाल, जो खुद-बखुद परिवार का अभिभावक बन बैठा था और उसका एक मात्र उद्देश्य था अपने आवारा लड़के की शादी रूपा से कर देना, ताकि दुर्गादेवी की सारी संपत्ती उसके हाथ लग जाये!

सेठ रतनलाल को लगा कि स्वर्गीय भार्गव की स्मृति के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने का एक तरीका यह हो सकता है कि अपने दोनों बेटों राम और लक्ष्मण के लिये उनकी बेटियों रूपा और शांति को ब्याह कर ले आये! पर उनके प्रस्ताव को अभद्रता के साथ ठुकरा दिया गया। उससे उन्हें चोट लगी।

उनके सुपुत्रों को अपने पिता की मानसिक स्थिति का पता था। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि वे उन दो लड़कियों को ब्याह लाने की कोई तरकीब खोज निकाले और पिता की इच्छा पूरी हो सके? आखिर करके देखें!

उन दोनों ने मिलके एक योजना बनायी। उसके अनुसार (क्रमशः)

एच एम वी की बच्चों को प्यार भरी भेंट

अन्तर्राष्ट्रीय बाल वर्ष समाप्त हो गया है। किन्तु उसकी प्रेरणा हमारे साथ बराबर बनी रहेगी और हम पहले की तरह ही बच्चों को देते रहेंगे एक से बढ़ कर एक शिक्षाप्रद और दिलचस्प उपहार। नीचे प्रस्तुत है हमारे उपहारों की एक झलक :

"बहादुर मोर और चिड़ियों का राजा"
स्टीरियो एल पी ४५ पर बच्चों की दो बहुत ही दिलचस्प कहानियाँ।

"चूहा चुहिया की कहानी और लालच के लड्डू" एल पी ४५ पर एच एम वी की इन दोनों चित्ताकर्षक नाटिकाओं को नन्हे-मुन्नों ने बहुत पसंद किया है।

"सॉन्ग्स फॉर चिल्ड्रेन"—लता मंगेशकर एल पी पर बच्चों के लिए लता के गाये हुए अनेक फिल्मों के चुनिन्दा गानों का संग्रह।

"मेरे पास आओ" (मि० नटवरलाल) एस पी पर। अमिताभ बच्चन ने अपने इस पहले ही गाने से सचमुच बच्चों का दिल जीत लिया है।

माया सामी का "हैपी बर्थडे टु यू" स्टीरियो एस पी पर। अपना जन्मदिन मनाना हो या किसी और का—बच्चे यह रेकार्ड अवश्य सुनना चाहेंगे।

अपने बच्चों को इन शिक्षामूलक तथा मनोरंजक रेकार्डों का उपहार दीजिये जो उन्हें आनेवाले अनेक वर्षों तक इस बाल वर्ष की याद दिलाता रहे।

अपने करीब के एच एम वी डीलर से अपने मनपसन्द रेकार्ड लीजिए।

हिज़ मास्टर्स वायस

GC 3631

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे। आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास -६०० ०२६

राम और श्याम

दूसरी दुनियां का दोस्त